मार्क्सवाद और संशोधनवाद

I

मार्क्सवाद का विकास

"क्या लोग प्राचीन काल से सत्य, शिव और सुन्दर की चर्चा नहीं करते आये हैं? इसके विपरीत तत्व है असत्य, अशिव और असुन्दर। इसके पहले तीन का अस्तित्व दूसरे तीन के बिना नहीं हो सकता। सत्य का अस्तित्व असत्य की तुलना में विद्यमान रहता है। मानव समाज और प्रकृति में भी हर वस्तु अनिवार्य रूप से अलग-अलग भागों में विभक्त हो जाती है, केवल अलग-अलग ठोस स्थितियों में ही उसकी अंतर्वस्तु और वाह्य रूप में भिन्नता आ जाती है। कोई न कोई गलत बात हमेशा होती रहेगी, अशिव और असुन्दर हमेशा मौजूद रहेंगे। सही और गलत, शिव और अशिव, सुन्दर और असुन्दर, ये विपरीत तत्व हमेशा मौजूद रहेंगे। यही बात सुगन्धित फूलों और जहरीली खरपतवार के बारे में भी सच है। इनके बीच के सम्बन्ध विपरीत तत्वों की एकता और संघर्ष वाले सम्बन्ध होते हैं। तुलना किये बिना भेद करना असम्भव है। भेद किये बिना और संघर्ष किये बिना विकास करना असंभव है। सत्य का विकास असत्य के विरुद्ध संघर्ष के जरिये ही होता है। मार्क्सवाद का भी इसी प्रकार विकास होता है। मार्क्सवाद का विकास पूंजीवादी और निम्न पूंजीवादी विचारधारा के विरुद्ध संघर्ष के दौरान ही होता है, और उसका विकास केवल संघर्ष के जरिये ही होता है।" (माओ, 'पार्टी के प्रचार-कार्य सम्बन्धी सम्मेलन में भाषण', माओ त्से तुङ की संकलित रचनाएं, ग्रंथ 5, पृष्ठ, 408-409, प्रोग्रेसिव पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली)

यह सर्वविदित बात है कि मार्क्सवाद शब्द का प्रयोग स्वयं मार्क्स ने नहीं किया था। यह नाम तो उनके विरोधियों द्वारा दिया गया था। उन्होंने मार्क्स के दर्शन, राजनैतिक अर्थशास्त्र से लेकर रोजमर्रा के व्यावहारिक सवालों पर ली जाने वाली अवस्थितियों को मार्क्सवाद के नाम से सम्बोधित करना शुरू किया। बाद में यह इतना प्रचलित हो गया कि यह मार्क्स, एंगेल्स के महान विचारधारात्मक कार्यों, संघर्षों, शिक्षाओं, अवस्थितियों का आम लोकप्रिय नाम बन गया। यानी मार्क्सवाद एक ऐसे संघर्ष का परिणाम है जो मार्क्स, एंगेल्स ने अपने जीवनकाल में आमूलवादी तरुण हेगेलपंथियों से लेकर प्रत्यक्षवादी ड्यूहरिंग आदि से किया। और यह संघर्ष और मार्क्सवाद का विकास लगातार जारी है।

3 अप्रैल 1908 को लेनिन ने एक लेख 'मार्क्सवाद और संशोधनवाद' के नाम से लिखा था। इस लेख में लेनिन ने मार्क्सवाद की तब तक की विकास यात्रा को दो हिस्सों में बांटा था। पहले काल को लेनिन 1840 से 1890 तक तथा दूसरे काल को 1890 से उसके बाद गिना था। पहले काल में मार्क्सवाद मजदूर आंदोलन में मौजूद विभिन्न विचारधाराओं से विजयी होकर उभरा था। दूसरे काल में वह संशोधनवाद के रूप में उभर कर आयी नयी प्रवृत्ति के साथ चले दुर्धर्ष संघर्ष में विजयी हुआ था।

लेनिन ने लिखा था,

"... ... ... अपने अस्तित्व की पहली अर्द्धशताब्दी में (1840 के बाद) मार्क्सवाद उन सिद्धान्तों से लड़ता रहा, जो मूलतः उसके विरोधी थे। 1840-45 के दौरान मार्क्स और एंगेल्स ने आमूलवादी तरुण हेगेलपंथियों से हिसाब चुकता किया, जिनका दृष्टिकोण प्रत्ययवादी दृष्टिकोण पर आधारित था। पांचवें दशक के अंत में संघर्ष आर्थिक शिक्षाओं के क्षेत्र में, प्रूदोंपंथ के विरोध में प्रकट हुआ। 1848 के तूफानी साल में सामने आने वाली पार्टियों तथा शिक्षाओं की आलोचना के रूप में छठी दशाब्दी में इस संघर्ष की निष्पत्ति हुई। सातवीं दशाब्दी में यह संघर्ष आम सिद्धान्तों के क्षेत्र से ऐसे क्षेत्र में पहुंचा, जो प्रत्यक्ष मजदूर आंदोलन के अधिक निकट था: इंटरनेशनल से बाकूनिनवाद का निष्कासन। जर्मनी के अन्दर आठवीं दशाब्दी के शुरू में प्रूदोंवादी म्यूल-बर्गर और अंत में प्रत्यक्षवादी ड्यूहरिंग कुछ समय के लिए आगे आ गये। लेकिन सर्वहारा वर्ग पर दोनों का ही प्रभाव नगण्य हो चुका था। मजदूर आंदोलन की सभी दूसरी विचारधाराओं पर मार्क्सवाद निस्संदेह विजयी हो रहा है।

"पिछली सदी की अंतिम दशाब्दी तक यह विजय मुख्यतया पूरी हो गयी। लैटिन देशों में भी, जहां प्रूदोंवाद की परंपराएं अधिकतम काल तक कायम रही थी, मजदूर वर्ग की पार्टियों ने वस्तुतः मार्क्सवादी आधार पर अपने कार्यक्रम और कार्यनीति की रचना की। मियादी अंतर्राष्ट्रीय कांग्रेसों के रूप में मजदूर आंदोलन का पुनरुज्जीवित अंतर्राष्ट्रीय संगठन तत्काल और प्रायः बिना संघर्ष के सभी मूल बातों में मार्क्सवाद के आधार पर खड़ा हो गया। लेकिन जब मार्क्सवाद ने अपने प्रति वैमनस्य रखने वाली सभी न्यूनाधिक अविकल शिक्षाओं को निकाल बाहर किया, तब उन शिक्षाओं में अभिव्यक्त प्रवृत्तियां अपने लिए अन्य मार्ग ढूढ़ने लगीं। संघर्ष के रूप और कारण बदल गये, लेकिन संघर्ष चलता रहा। और मार्क्सवाद के अस्तित्व की दूसरी अर्द्धशताब्दी (पिछली सदी के अंतिम दशाब्दी से) मार्क्सवाद में ही निहित एक मार्क्सवाद विरोधी संघर्ष से प्रारम्भ हुई।

"भूतपूर्व कट्टर मार्क्सवादी बर्नस्टीन ने अधिकतम कोलाहलपूर्वक और मार्क्स के संशोधन की, मार्क्स पर पुनर्विचार की, संशोधनवाद की अधिकतम अविकल अभिव्यक्ति के साथ सामने आकर इस प्रवृत्ति को अपना नाम प्रदान किया। ... .

"प्राक्-मार्क्सवादी समाजवाद चकनाचूर हो चुका है। अब वह अपने स्वतंत्र आधार पर नहीं, बल्कि संशोधनवाद के रूप में मार्क्सवाद के आम आधार पर संघर्ष चला रहा है।" (लेनिन, 'मार्क्सवाद और संशोधनवाद', संकलित रचनाएं, दस खंडों में, खंड-3, पृष्ठ 375-376, प्रगति प्रकाशन, मास्को)

यहां लेनिन मार्क्सवाद की विकास यात्रा के एक पड़ाव का बेहद संक्षेप में वर्णन कर रहे हैं। इसमें मुख्य बात यह सामने आती है कि मार्क्सवाद को एक समय मजदूर आंदोलन में मौजूद विभिन्न विचारधाराओं से कदम-कदम पर लड़ना पड़ा। जब ये विचारधाराएं पूर्णतः परास्त होकर पहले अलगाव में पड़ीं फिर लुप्तप्रायः हो गयीं तब मार्क्सवाद के सामने संघर्ष एक नये रूप में फूटा। यह 'मार्क्सवाद' को आधार बनाकर ही मार्क्सवाद के खिलाफ संघर्ष चलाने लगा। यह मांग करने लगा कि बदली हुयी विश्व परिस्थिति में मार्क्स के सिद्धान्त पुराने पड़ गये हैं और इसलिए उसमें संशोधन की आवश्यकता है। बर्नस्टीन इसका पुरोधा बन कर उभरा। संशोधनवाद शब्द तभी से प्रचलन में आया।

बर्नस्टीन कहता था कि पूंजीवाद में हिंसक तरीके से, क्रांति करने की कोई जरूरत नहीं है बल्कि पूंजीवाद शांतिपूर्ण तरीके से समाजवाद में विकसित हो सकता है। उसका कहना था कि मजदूर वर्ग को आधुनिक पूंजीवादी समाज की राजनीतिक व्यवस्था को नष्ट नहीं करना चाहिए बल्कि केवल और अधिक विकसित करना चाहिए। उसके अनुसार समाजवाद तक पहुंचने का एक मात्र रास्ता कानूनी संसदीय रास्ता था। वह हिंसात्मक क्रांति करने, पुरानी राज्य-मशीनरी को ध्वस्त करने और सर्वहारा तानाशाही का विरोध करता था। "अंतिम लक्ष्य कुछ नहीं, आंदोलन ही सब कुछ है", बर्नस्टीन की यह प्रचलित उक्ति संशोधनवाद का सार बन कर उभरी है। संशोधनवाद मार्क्सवादी प्रत्ययों का प्रयोग करने वाली पूंजीवादी विचारधारा है।

इस तरह से संशोधनवाद मजदूर वर्ग की मुक्ति से, उसके "अन्तिम लक्ष्य", साम्यवाद से गद्दारी का दर्शन बन कर उभरा। और बर्नस्टीन के जमाने से लेकर आज तक उसके रूप में कितने ही परिवर्तन आ गये हों परन्तु उसका अंतर्य तब से लेकर आज तक जस का तस बना हुआ है-मजदूर वर्ग से गद्दारी, क्रांति के स्थान पर सुधारवाद की पैरोकारी, पूंजीपति वर्ग के सामने पूर्ण समर्पण और बार-बार यह बतलाना कि मार्क्सवाद पुराना पड़ चुका है और बदली हुयी विश्व परिस्थिति में उसे लागू करना संभव नहीं है-यही समय-समय पर प्रकट होने वाले संशोधनवाद की मूल बातें हैं।

और इसलिए मार्क्सवाद को अपने जन्म से लेकर आज तक लगातार पूंजीवादी और निम्न पूंजीवादी विचारधारा से संघर्ष करना पड़ा है ताकि मजदूर वर्ग की मुक्ति के ऐतिहासिक मिशन को आगे बढ़ाया जा सके। माओ की भाषा में मार्क्सवाद सुगन्धित फूल है तो संशोधनवाद खरपतवार। और समय ने साबित किया है कि खरपतवार लगातार पैदा होती रही है और इसको नष्ट करने का संघर्ष लगातार मौजूद रहता है। और यह संघर्ष कभी खत्म नहीं होता है। और इस संघर्ष के दौरान ही मार्क्सवाद लगातार विकसित होता चला गया। मार्क्सवाद से वह विकसित होकर वह 'मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओ विचारधारा' के स्तर पर पहुंच गया। दूसरे शब्दों में, आज का मार्क्सवाद : 'मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओ विचारधारा' है।

मार्क्सवाद से मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओ विचारधारा के स्तर तक विकसित होने के दौरान उसे बर्नस्टीन, काउत्स्की, त्रात्स्की, बुखारिन, कामेनेव, जिनोवियेव, ख्रुश्चोव, टीटो, यूरो कम्युनिज्म, अनवर होजा, ल्यू-श्याओ-ची, देंग-श्याओ-पिंङ आदि संशोधनवादी विचारधाराओं से लड़ना पड़ा है। आगे लेख में प्रमुख संशोधनवादी विचारधाराओं के बारे में चर्चा है। यह घात-प्रतिघात का इतिहास है।

माओ ने जो बातें कभी लेनिनवाद के संदर्भ में कही थी, वही कमोबेश माओ विचारधारा के ऊपर भी लागू होती हैं। माओ ने कहा था,

> "लेनिनवाद के सिद्धान्त ने मार्क्सवाद का विकास किया है। उसने उसका विकास किन-किन क्षेत्रों में किया है? पहले, विश्व दृष्टिकोण के क्षेत्र में, यानी भौतिकवाद और द्वन्द्ववाद के क्षेत्र में; और दूसरे, क्रांतिकारी सिद्धान्त और कार्यनीति के क्षेत्रों में, विशेषकर वर्ग संघर्ष, सर्वहारा अधिनायकत्व और सर्वहारा वर्ग की राजनीतिक पार्टी आदि समस्याओं के क्षेत्र में। और इसके अलावा समाजवादी निर्माण के बारे में भी लेनिन की शिक्षाएं है। निर्माण-कार्य 1917 की अक्टूबर क्रांति से आरम्भ होने के बाद लगातार चलता रहा, और इस प्रकार लेनिन को निर्माण कार्य में सात वर्ष का व्यावहारिक अनुभव प्राप्त हुआ, जो मार्क्स को प्राप्त नहीं हो सका था। मार्क्सवाद-लेनिनवाद के ठीक इन्हीं बुनियादी उसूलों को हमने सीखा है।" (माओ, 'आठवां केन्द्रीय कमेटी के दूसरे प्लेनरी अधिवेशन में भाषण, पेज-318, ग्रन्थ-5, प्रोग्रेसिव पब्लिकेशन, नई दिल्ली)

लेनिनवाद को समृद्ध करने में लेनिन की मृत्यु के बाद स्तालिन का अमिट योगदान है। स्तालिन ने मार्क्सवाद-लेनिनवाद की विभिन्न प्रकार के अवसरवाद, त्रात्स्कीपंथियों, जिनोवियेवपंथियों, बुखारिनपंथियों जैसे लेनिनवाद के शत्रुओं और पूंजीपति वर्ग के एजेण्टों के खिलाफ संघर्ष करते हुए रक्षा की और उसे विकसित किया।

समाजवाद निर्माण के समय उन्होंने कई तरह की चुनौतियों का सामना किया। वे ऐसे रास्ते पर चल रहे थे जिसकी पहले कोई मिसाल मौजूद न थी, इसलिए उनसे कई भूलें, गलतियां हुईं। जिसके कई गलत विचारधारात्मक स्रोत भी थे।

माओ ने स्तालिन को महान मार्क्सवादी-लेनिनवादी बताते हुए उनकी भूलों, गलतियों के विचारधारात्मक व भौतिक स्रोतों को ढूंढ़ते हुए मार्क्सवाद-लेनिनवाद को एक नये स्तर पर पहुंचाया। उन्होंने समाजवाद में पूंजीवाद की पुनर्स्थापना के खतरे से लड़ने के लिए 'महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति' का अस्त्र दिया। चीन में महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति के समय माओ विचारधारा और समृद्ध हुयी।

माओ विचारधारा के विकास का इतिहास अभिन्न रूप से चीन की कम्युनिस्ट पार्टी में चले विचारधारात्मक संघर्ष, चीन की नवजनवादी क्रांति, महान अग्रवर्ती छलांग व महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति के साथ जुड़ा हुआ है। माओ विचारधारा के इस क्रमिक विकास में ढेरों ऐसे सिद्धान्त, नियम व साथ ही माओ द्वारा मार्क्सवाद-लेनिनवाद की ऐसी प्रस्थापनायें सामने आयीं जिनका सार्वभौमिक व दीर्घकालिक महत्व है। यहां वही बात लागू होती है जो माओ के द्वारा उपरोक्त उद्धरण में लेनिनवाद के संदर्भ में कही गयी थी। माओ

को न केवल देश के भीतर मौजूद संशोधनवादियों से लड़ना पड़ा बल्कि उन्हें विश्व कम्युनिस्ट आंदोलन में संशोधनवाद के नये अवतारों ख्रुश्चोव, ब्रेझनेव आदि से भी लड़ना पड़ा।

माओ की मृत्यु और चीन में पूंजीवाद की पुनर्स्थापना के बाद दुनिया में कोई समाजवादी देश नहीं बचा। जो देश अपने को समाजवादी कहते हैं वहां समाजवाद के झीने छद्म अवरण में पूंजीवाद ही है। चीन, उ. कोरिया, वियतनाम, लाओस, क्यूबा में समाजवाद के नाम पर राजकीय और निजी पूंजीवाद का मिश्रण है। मजदूर वर्ग यहां अन्य देशों की तरह उजरती गुलाम है।

माओ के जाने के बाद संशोधनवाद की कुछ नयी किस्में सामने आयीं। इनमें से ज्यादातर के सम्बन्ध किसी न किसी रूप में ख्रुश्चोवी किस्म के संशोधनवाद से थे। देंग-श्याओ-पिंङ, किम-इल-सुंग, फिदेल कास्त्रो, ले दुआन आदि ने जो बातें बदली हुयी परिस्थितियों आदि के नाम पर खुले और छिपे तौर पर कीं वे अपने सार में मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओ विचारधारा में संशोधन के प्रयास थे। दुनियाभर के क्रांतिकारी कम्युनिस्टों ने इसका तीखा विरोध किया। और विरोध आज भी जारी है।

मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओ विचारधारा पर एकदम नया हमला भूतपूर्व मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओ विचारधारा मानने वाले बॉब अवाकिएन अपने नये सिद्धान्त 'नव संश्लेषण' से किया है। भटकाव पूर्णतः उजागर हो गया है। यह सिद्धान्त बौद्धिक दिवालियेपन की भी मिसाल है।

इस तरह हम देखते हैं कि मार्क्सवाद का विकास पूंजीवादी और निम्न पूंजीवादी विचारधारा के विरुद्ध संघर्ष से होता है। और यह संघर्ष न केवल आज मौजूद है बल्कि भावी समाजवादी समाज में पूर्व के समाजवादी समाजों की तरह नये रूप में प्रकट होता रहेगा।

हमारे युग में ऐसे भी कई कार्य हुये हैं जिनमें मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओ विचारधारा को 'माओवाद' के नाम से सम्बोधित करने की वकालत की गयी है। अति वामपंथी खेमों से यह प्रयास हुए हैं। इन प्रयासों में 'माओवाद' कहने के नाम पर जो तर्क दिये हुए हैं वे खोखले फिकरों से भरे पड़े हैं। निम्न पूंजीवादी भटकाव ली हुई यह प्रवृत्ति नया करने के नाम पर मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओ विचारधारा की 'रिब्रांडिंग' करने लगती है। यह मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओ विचारधारा को जड़सूत्रवादी सिद्धान्त में बदलने की कवायद है। यह समाज में बदली हुयी परिस्थितियों को संज्ञान में लेने से इंकार सा करने लगती है परन्तु ठीक सूत्रीकरण को और ठीक करने से नहीं चूकती है।

इस तरह की प्रवृत्तियों के बीच से मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओ विचारधारा के 'ठोस देशी हालातों' के अनुरूप नये पथों की भी घोषणा पिछले दशकों में हुयी। 'गोन्जालो थॉट', 'प्रचण्ड पथ' इत्यादि। परन्तु इनका हस्र इनके प्रवक्ताओं के जीवनकाल में ही हो गया। 'प्रचण्ड पथ' का नामलेवा तो स्वयं प्रचण्ड भी नहीं रहे।

मार्क्सवाद और संशोधनवाद के बीच चले दीर्घकालिक संघर्ष से यह स्पष्ट है कि हर बार मार्क्सवाद इस संघर्ष से और विकसित और श्रेष्ठ साबित हुआ है। उसकी वैज्ञानिक प्रस्थापनाएं और निखरी हैं। इस बात को हम खासकर सर्वहारा अधिनायकत्व के संदर्भ में देख सकते हैं। सर्वहारा अधिनायकत्व के बारे में मार्क्स के विचारों से लेकर माओ के विचारों में आयी गहराई और विशिष्टता को देखा जा सकता है।

'कार्ल मार्क्स की शिक्षा की ऐतिहासिक नियति' नामक अपने एक लेख में लेनिन ने बताया कि मार्क्सवाद की सैद्धान्तिक विजय ने उसके शत्रुओं को मार्क्सवादी नकाब चढ़ाने को बाध्य किया है। लेनिन ने लिखा था,

> "इतिहास का द्वन्द्वात्मक विकास ऐसा है कि मार्क्सवाद की सैद्धान्तिक विजय उसके शत्रुओं को मार्क्सवादी **नकाब चढ़ाने** के लिए बाध्य करती है। अंदर से सड़ा हुआ उदारतावाद **समाजवादी अवसरवाद** के रूप में अपने को पुनरुज्जीवित करने का प्रयास करता है। जबर्दस्त लड़ाइयों के लिए शक्तियों की तैयारी के काल को वे लड़ाइयों से इंकार का काल समझते हैं।"
> (लेनिन, 'कार्ल मार्क्स की शिक्षा की ऐतिहासिक नियति', पृष्ठ-188, पैरा-2,खंड-4, संकलित रचनाएं, दस खंडों में प्रगति प्रकाशन मास्को, जोर मूल में)

बीसवीं सदी का पूरा इतिहास इस बात की तस्दीक करता है कि मार्क्सवाद, जो मजदूर वर्ग का पथप्रदर्शक सिद्धान्त है के शत्रुओं ने समय-समय पर मार्क्सवादी नकाब ओढ़कर ही मार्क्सवाद पर हमला बोला। चाहे वह काउत्स्की रहा हो या फिर त्रात्स्की या फिर ख्रुश्चेव या फिर देंङ-श्याओ-पिङ रहा हो। इनमें से हर एक ने अपने कुत्सित सिद्धान्तों के लिए मार्क्सवाद की आड़ ही ली। पर जैसा कि लेनिन ने कहा है कि इससे मार्क्सवाद हर बार पहले से अधिक शक्तिशाली, अधिक इस्पाती, अधिक जीवंत बन कर उभरा है।

आगे, हम देखेंगे कि बीसवीं सदी में मार्क्सवाद और संशोधनवाद के बीच छिड़े संघर्ष में वह कैसे पहले से अधिक शक्तिशाली, इस्पाती और जीवंत हो गया है।

बीसवीं सदी में संशोधनवादी खरपतवार की बहुत किस्में रही हैं। कुछ बेहद खतरनाक और कुछ कम खतरनाक। कुछ का प्रभाव बेहद व्यापक रहा है तो कुछ का प्रभाव सीमित रहा है। कुछ ने अंतर्राष्ट्रीय कम्युनिस्ट और मजदूर आंदोलन का भारी नुकसान किया तो कुछ को इनके द्वारा अधिक संज्ञान में नहीं लिया गया।

यहां हम प्रमुख संशोधनवादी धाराओं की चर्चा इस संदर्भ में करेंगे कि उन्होंने कैसे मार्क्सवाद पर हमला बोला और कैसे मार्क्सवाद के सच्चे अनुयायियों ने उनसे संघर्ष कर मार्क्सवाद का सृजनात्मक विकास किया।

II

संशोधनवाद के खिलाफ संघर्ष

यह सर्वविदित है कि संशोधनवाद शब्द, मार्क्सवादी साहित्य में सबसे पहले, दूसरे इंटरनेशनल, जिसकी स्थापना फ्रेडरिक एंगेल्स के मार्गदर्शन में हुई थी, के एक प्रमुख नेता एडुअर्ड बर्नस्टीन के द्वारा मार्क्स पर पुनर्विचार करने, संशोधन करने के दुराग्रह के साथ आया था। मार्क्सवाद पर यह हमला मार्क्सवाद के एक कट्टर समर्थक ने बोला था। इसलिए यह हमला मार्क्स व एंगेल्स के जमाने से भिन्न था। उस समय तक मार्क्स व एंगेल्स को मजदूर आंदोलन में व्याप्त पूंजीवादी, निम्न पूंजीवादी विचारधाराओं से लड़ना पड़ा था।

बर्नस्टीन ने यह हमला तब बोला जब स्वयं मार्क्स, एंगेल्स इस हमले का जवाब देने को मौजूद नहीं थे। बर्नस्टीन अपनी हैसियत व एंगेल्स के करीबी मित्र होने का दावा करते हुए मार्क्सवाद में संशोधन की मांग कर रहा था। बर्नस्टीन की तरह कोनराद स्मिद्त भी मार्क्सवाद के सिद्धान्तों में संशोधन की मांग कर रहा था। दोनों मिलकर मार्क्सवाद पर हमला कर रहे थे।

बर्नस्टीन का हमला मूलतः राजनैतिक था तो स्मिद्त का हमला दार्शनिक था। कोनराद स्मिद्त बर्नस्टीन की तरह एक समय मार्क्सवाद से प्रभावित होकर मार्क्सवादी बन गया था। मार्क्सवादी आंदोलन में कोनराद स्मिद्त की प्रसिद्धि एंगेल्स से पत्र व्यवहार को लेकर थी।

बर्नस्टीन कहता था कि उन्नीसवीं सदी के दूसरे भाग में पूंजीवाद का जो विकास हुआ है उसने मार्क्सवाद की बातों को गलत साबित कर दिया है। उसने कहा कि 'कृषक अर्थव्यवस्था में संकेन्द्रण तथा बड़े उत्पादन द्वारा छोटे का उन्मूलन बिलकुल नहीं होता और वाणिज्य तथा उद्योग में भी बेहद धीरे-धीरे होता है', कि 'अब संकट अधिक विरल और दुर्बल हो गये हैं और संभवतः कार्टेल और ट्रस्ट पूंजी के संकट को बिलकुल मिटा देंगे', कि वर्गीय वैरभाव के कुंठित और मद्धिम होने की प्रवृत्ति के कारण "ध्वंस का सिद्धान्त" अब निराधार हो गया है।

वह कहता था कि राजनैतिक स्वतंत्रता, जनवाद और सार्विक मताधिकार के कारण 'वर्ग संघर्ष' की बात का आधार मिट गया है और बहुमत की इच्छा के कारण जहां शासन चलता हो वहां वर्ग संघर्ष के सिद्धान्त की कोई आवश्यकता नहीं है। वह कहता था, "अंतिम लक्ष्य कुछ नहीं, आंदोलन ही सब कुछ है"। बर्नस्टीन की यह उक्ति एक तरह से संशोधनवाद की सार अभिव्यक्ति बन गयी।

कोनराद स्मिद्त का हमला मार्क्सवाद के दार्शनिक आधारों पर था। वह क्लासिकीय जर्मन दर्शन के जनक इमैनुएल कांट की बातों को दोहराता था और समाजवाद और मजदूरों के लिए सही बतलाता था। वह कहता था कि कांट की ओर लौटो। 'निज-रूप-वस्तु' की कांट की बात ठीक है। द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद को वह बेकार की चीज घोषित कर वह क्रमिक विकास को सही ठहराता था। इस तरह वह बर्नस्टीन के 'अंतिम लक्ष्य" कुछ नहीं को दार्शनिक आधार प्रदान करता था। क्रांति की आवश्यकता ही नहीं है क्योंकि पूंजीवाद क्रमिक विकास करते हुए स्वयं ही समाजवाद में बदल जायेगा।

बर्नस्टीनवाद सिर्फ जर्मनी तक सीमित नहीं रहा। उसका प्रभाव यूरोप के कई देशों में फैल गया। मिलेरांवाद की प्रवृत्ति भी पैदा हो गई जिसके तहत समाजवादी बुर्जुआ मंत्रिमंडल तक में शामिल होने लगे।

बर्नस्टीनवाद के खिलाफ दूसरे इंटरनेशनल में तीखा विचारधारात्मक संघर्ष फूट पड़ा। प्लेखानोव, कार्ल काउत्स्की, रोजा लक्जमबर्ग और लेनिन ने मार्क्सवाद के हिफाजत की लड़ाई लड़ी। और इस दौरान उन्होंने बर्नस्टीन के संशोधनवाद के विचारधारात्मक, राजनैतिक व आर्थिक हमलों का माकूल जवाब दिया। उसके वर्गीय आधार को उजागर किया। इसका परिणाम यह निकला कि बर्नस्टीन और उसके अनुयायी अलग-थलग पड़ गये। बर्नस्टीन के मंसूबे धरे रह गये। बर्नस्टीन बहुत दिन तक जिंदा रहा परन्तु उसकी हैसियत अंतर्राष्ट्रीय मजदूर आंदोलन में कुछ नहीं बची थी। और इस बीच में पूंजीवाद के विकास का "शांतिमय दौर" तेजी से बीत रहा था। उसने उसके सारे शिगूफों की जमीन खिसका दी थी। मार्क्सवाद की बातों की पुनः पुष्टि स्वयं पूंजीवाद के विकास ने कर दी थी।

दूसरे इंटरनेशनल में बर्नस्टीन की औपचारिक विदाई के बावजूद अवसरवाद जो कि वर्ग सहयोग के रास्ते पर चलता है और वर्ग संघर्ष से इंकार करता है, जड़ जमा रहा था। यानी संशोधनवाद एक नये अवतार में सामने आने वाला था। इस बार भी एक सुस्थापित मार्क्सवादी चिंतक इसके पैरोकार बन रहे थे। इनका नाम कार्ल काउत्स्की था। वे एंगेल्स के बाद दूसरे इंटरनेशनल के प्रमुख नेता बन कर उभरे थे। उनका साथ देने प्लेखानोव जैसे मार्क्सवादी दार्शनिक चिंतक भी थे।

अवसरवाद की पहली अभिव्यक्ति दूसरे इंटरनेशनल की 1907 की स्टुटगार्ट कांग्रेस में हुयी थी जिसमें जर्मन पार्टी के प्रतिनिधियों ने औपनिवेशिक प्रश्न पर खुलेआम साम्राज्यवादी नीति अपनायी थी। इस नीति का आशय था कि साम्राज्यवाद अपने औपनिवेशिक इलाकों में सभ्यता का प्रचार कर रहा है।

दूसरे इंटरनेशनल का ढका-छुपा अवसरवाद तब एकदम उजागर हो गया जब पहला विश्वयुद्ध फूट पड़ा। हालांकि उससे पहले 1907 की स्टुटगार्ट कांग्रेस और 1912 में बैसेल कांग्रेस में युद्ध विरोधी प्रस्ताव पास किये गये थे और सम्भावित युद्ध को लुटेरों के बीच युद्ध कहा गया था। युद्ध शुरू होते ही दूसरे इंटरनेशनल की पार्टियों के अधिकांश हिस्से सर्वहारा अंतर्राष्ट्रीयता को त्याग कर अपने देशों के पूंजीपति वर्ग के पीछे लामबंद हो गये।

पहला विश्व युद्ध अगस्त 1914 में शुरू हुआ। उस समय लेनिन ने अपने एक लेख 'यूरोपीय युद्ध में क्रांतिकारी सामाजिक जनवाद के कार्यभार' में लिखा,

"4- दूसरे इंटरनेशनल (1889-1914) के अधिकतर नेताओं द्वारा समाजवाद के साथ गद्दारी इस इंटरनेश्नल के विचारधारात्मक तथा राजनीतिक दिवालियेपन का परिचायक है। इस पतन का मुख्य कारण उसके अंदर उस टुटपुंजिया अवसरवाद का सचमुच दौर-दौरा रहा है, जिसके बुर्जुआ स्वरूप और खतरे की ओर सभी देशों के क्रांतिकारी सर्वहारा वर्ग के श्रेष्ठतम प्रतिनिधि बहुत दिन से इशारा करते आये हैं। समाजवादी क्रांति को अस्वीकार करते हुए और उसके स्थान पर बुर्जुआ सुधारवाद रखते हुए, वर्ग संघर्ष तथा खास वक्तों पर गृहयुद्ध में उसकी अनिवार्य परिणति से इंकार करते हुए और वर्ग सहयोग करते हुए, देशभक्ति तथा पितृभूमि की रक्षा के वेश में बुर्जुआ अंधराष्ट्रवाद का प्रचार करते हुए, और 'कम्युनिस्ट घोषणापत्र' द्वारा बहुत पहले प्रस्थापित समाजवाद के इस बुनियादी सत्य की उपेक्षा अथवा अवज्ञा करते हुए कि श्रम जीवियों का कोई स्वदेश नहीं है, सैन्यवाद के खिलाफ संघर्ष में सभी देशों के बुर्जुआ वर्ग के खिलाफ सभी देशों के सर्वहाराओं के क्रांतिकारी युद्ध की आवश्यकता को स्वीकार करने के बजाय अपने को भावुकतापूर्ण-कूपमंडूकीय दृष्टिकोण तक सीमित रखते हुए, बुर्जुआ संसदवाद तथा बुर्जुआ कानूनियत के आवश्यक उपयोग को, इस कानूनियत को जड़पूजा में परिवर्तित करते हुए, संकटों के युग में संगठन तथा आंदोलन के गैर कानूनी रूपों की अनिवार्यता को भुलाते हुए अवसरवादी बहुत दिनों से दूसरे इंटरनेशनल के पतन की तैयारी कर रहे थे।" (लेनिन, 'यूरोपीय युद्ध में क्रांतिकारी सामाजिक-जनवाद के कार्यभार', पृष्ठ 16-17, खण्ड-5, संकलित रचनाएं, दस खंडों में, वही)

लेनिन ने दूसरे इंटरनेशनल के संशोधनवाद के बरक्स स्थापित किया कि,

"मार्क्सवाद सर्वहारा की मुक्ति आंदोलन का सिद्धान्त है। अतएव स्पष्ट है कि वर्ग-सचेत मजदूरों को मार्क्सवाद के स्थान पर स्त्रूवेवाद के प्रतिस्थापन की प्रक्रिया पर कड़ी नजर रखनी चाहिए। इस प्रक्रिया की प्रेरक शक्तियां विविधतापूर्ण तथा बहुविध हैं। हम केवल तीन मुख्य शक्तियों की ओर संकेत करेंगे : (1) विज्ञान का विकास अधिकाधिक ऐसी सामग्री मुहैया कर रहा है, जो मार्क्स को सही सिद्ध करती है। यह उनके खिलाफ पाखण्डपूर्ण ढंग से संघर्ष करना आवश्यक बना देता है-मार्क्सवाद के सिद्धान्तों का खुले रूप में विरोध न किया जाये, अपितु मार्क्सवाद को स्वीकार करने का स्वांग रचा जाये तथा उसकी अंतर्वस्तु को कुतर्कों से शक्तिहीन बनाते हुए उसे बुर्जुआ वर्ग के लिए हानिरहित, पवित्र "देवप्रतिमा" में परिणत कर दिया जाये। (2) सामाजिक-जनवादी पार्टियों में अवसरवाद का विकास मार्क्सवाद में इस तरह की "काट छांट" करने का आधार प्रदान करता है, उसे अवसरवाद को सब तरह की रिआयतें देने के औचित्य के अनुकूल ढालता है। (3) साम्राज्यवाद का युग ऐसा युग है, जिसमें संसार दूसरे राष्ट्रों का उत्पीड़न करने वाले "महान" विशेषाधिकार प्राप्त राष्ट्रों के बीच विभक्त है। इन विशेषाधिकारों तथा इस उत्पीड़न से हासिल लूट के माल से कुछ जूठन निस्संदेह टुटपुंजिया तथा अभिजात वर्ग के कुछ तबकों तथा मजदूर नौकरशाही के हिस्से तक को पहुंच जाती है। ये तबके, जो सर्वहारा तथा मेहनतकश जनसाधारण की नगण्य अल्पसंख्या होते हैं, "स्त्रूवेवाद" की ओर खींचते चले जाते हैं, क्योंकि वह **समस्त** राष्ट्रों के उत्पीड़ित जनसाधारण के विरुद्ध "अपने" राष्ट्रीय बुर्जुआ वर्ग के साथ उनकी संघबद्धता का औचित्य सिद्ध करने के काम आता है।" (लेनिन, 'दूसरे इंटरनेशनल का पतन' पृष्ठ-95, जोर मूल में, वही)

इस तरह से लेनिन ने मार्क्सवाद पर दूसरे इंटरनेशनल के नेताओं खासकर काउत्स्की के द्वारा बोले जा रहे भीषण हमले को नाकाम कर दिया। उन्होंने काउत्स्की के 'अति साम्राज्यवाद के सिद्धान्त' की पोल खोल कर रख दी और बता दिया कि काउत्स्की मार्क्सवाद की सिर्फ विकृत और भ्रष्ट व्याख्या कर रहे हैं। उन्होंने बताया कि दूसरे इंटरनेशनल की पार्टियां जो कि शांतिकाल की पार्टियां थीं वे विश्वयुद्ध फूट पड़ने पर दिवालिया साबित हो गयी हैं। वे क्रांतियों को नेतृत्व देने में अक्षम हैं।

बाद में दूसरे इंटरनेशनल के नेताओं ने 'महान अक्टूबर समाजवादी क्रांति' और सर्वहारा तानाशाही के सिद्धान्त का पूरी ताकत से विरोध किया। प्लेखानोव तो 'महान अक्टूबर समाजवादी क्रांति' का आखिरी सांस तक विरोध करते रहे। उनकी मृत्यु 17 मई, 1918 को हुयी परन्तु काउत्स्की लम्बे समय (1938) तक जिये। उन्होंने कभी भी रूस की क्रांति और समाजवाद के निर्माण को नहीं स्वीकारा। और तो और दूसरे इंटरनेशनल के नेताओं ने उस वक्त और भी घृणित भूमिका निभायी थी जब पहले विश्वयुद्ध के अंत में जर्मनी, आस्ट्रिया, हंगरी, इटली आदि देशों में क्रांतियां फूट पड़ी थीं। उन्होंने क्रांतियों को कुचलने में शासक वर्ग का साथ दिया था।

इस पूरे दौरान महान क्रांतिकारी नेता व सर्वहारा शिक्षक लेनिन ने मार्क्सवाद का सृजनात्मक विकास किया और 'महान अक्टूबर समाजवादी क्रांति' का नेतृत्व करते हुए समाजवाद निर्माण की राह प्रशस्त की। मार्क्सवाद को उन्होंने एक नयी ऊंचाई पर पहुंचाया जिसे स्तालिन ने ठीक ही लेनिनवाद का नाम दिया। उन्होंने बताया कि साम्राज्यवाद और सर्वहारा क्रांतियों के दौर का मार्क्सवाद, मार्क्सवाद-लेनिनवाद है।

लेनिनवाद को और स्पष्ट करते हुए स्तालिन ने लिखा था,

"लेनिनवाद साम्राज्यवाद तथा सर्वहारा क्रांति के युग का मार्क्सवाद है। और सही शब्दों में लेनिनवाद सामान्य तौर में सर्वहारा की क्रांति का सिद्धान्त और कार्यनीति है, विशेष तौर में सर्वहारा के अधिनायकत्व का सिद्धान्त और कार्यनीति है।" (स्तालिन, लेनिनवाद की मूल समस्याएं, पेज-5 अनुवाद प्रदीप श्रीवास्तव, सो. प. सेन्टर कानपुर, उ.प्र)

कुल मिलाकर कहें तो लेनिन ने काउत्स्की, प्लेखानोव एवं अन्यों द्वारा मार्क्सवाद को विकृत करने की कार्यवाही से उसकी रक्षा की। पूंजीवाद की नयी उच्चतम अवस्था साम्राज्यवाद का मार्क्सवादी विश्लेषण किया और बताया कि यह सर्वहारा क्रांतियों का युग है। उन्होंने यह स्थापित किया कि मार्क्सवादी होने का सीधा अर्थ है सर्वहारा तानाशाही के सिद्धान्त को स्वीकारना। उन्होंने पेशेवर

क्रांतिकारियों पर आधारित लौह अनुशासन में बंधी पार्टी की अवधारणा पेश की। उन्होंने बताया कि पार्टी को कानूनी और गैरकानूनी कामों में माहिर होना चाहिए। उन्होंने सर्वहारा अंतर्राष्ट्रीयता पर दृढ़ता से खड़े होने को एक मार्क्सवादी के लिए आवश्यक बताया। मार्क्सवाद अब विकसित होकर एक नयी मंजिल मार्क्सवाद- लेनिनवाद पर पहुंच गया था। 1924 में लेनिन की मृत्यु के बाद मार्क्सवाद-लेनिनवाद की रक्षा स्तालिन ने की। लेनिन की मृत्यु के तुरन्त बाद मार्क्सवाद-लेनिनवाद पर हमले शुरू हो गये थे। और इन हमलों की शुरुआत त्रात्स्की ने की जिसने लम्बे समय तक लेनिन व बोल्शेविक पार्टी का विरोध किया था परन्तु 1917 के मध्य में वह बोल्शेविक पार्टी में शामिल हो गया था।

वह रूस में सामाजिक-जनवादी पार्टी की दूसरी कांग्रेस जो कि वर्ष 1903 में हुयी थी के समय से लेकर 1917 के मध्य तक लगातार बोल्शेविक पार्टी का विरोध करता रहा। वह मूलतः मेंशेविकों के साथ इस काल में रहा। त्रात्स्की ने महान समाजवादी क्रांति को बेहद नजदीक पाकर अपना पाला बदला था। समय ने साबित किया कि त्रात्स्की ने बोल्शेविक पार्टी के सिद्धान्तों को केवल ऊपरी तौर पर स्वीकारा था। असल में उसने अपने गलत विचारों व सिद्धान्तों को कभी नहीं छोड़ा।

इसका सबसे बड़ा उदाहरण उसका 'सतत् क्रांति' का सिद्धान्त था। उसने अपना यह सिद्धान्त रूस की 1905-07 की क्रांति के दौरान विकसित किया। इस सिद्धान्त के अनुसार रूस में मजदूरों-किसानों की जनवादी तानाशाही के चरण की सम्भावना नहीं थी। वह नारा देता था 'जार नहीं मजदूरों का राज्य'। वह मानता था कि रूस में क्रांति तभी टिक सकती है जब यूरोप में क्रांति हो जाए।

'सतत् क्रांति' का सिद्धान्त किसानों की भूमिका को नकारात्मक रूप में देखता है खासकर तब जब क्रांति के बाद सर्वहारा तानाशाही कायम की जायेगी। वह बुर्जुआ जनवादी व समाजवादी कार्यभारों को आपस में गड्ड-मड्ड कर देता था और दावा करता था कि रूस की विशिष्ट परिस्थितियों के कारण ऐसा होगा।

1917 में बोल्शेविक पार्टी में शामिल होने के समय कही गयी बातों और बाद में स्तालिन से अपने विरोध के समय में कही गयी बातों से यह स्पष्ट हो जाता है कि त्रात्स्की ने 'सतत् क्रांति' के सिद्धान्त को कभी छोड़ा ही नहीं था बस वक्ती तौर पर वह इस पर चुप लगा बैठा था। स्पष्टतः गलत साबित हो जाने के बाद भी वह अपने सिद्धान्त को ठीक ठहराता रहा। त्रात्स्की की वामपंथी लफ्फाजी उसके सभी प्रमुख सिद्धान्तों में खुलकर सामने आती है। 'एक देश में समाजवाद संभव नहीं है', 'तीसरी दुनिया के औपनिवेशिक-अर्द्ध औपनिवेशिक देशों में सीधे सर्वहारा तानाशाही कायम होगी', 'समाजवाद में ट्रेड-यूनियनों की भूमिका' आदि के संदर्भ में उसके द्वारा कही गयी बातों से स्पष्ट है कि वह वामपंथी बातों की आड़ में विश्व पूंजीवाद के हितों को आगे बढ़ाता है। उसका बस चलता तो रूस में पूंजीवाद की वापसी 1924 में हो गयी होती। बाद में तो उसने सोवियत संघ में समाजवाद व समाजवादी राज्य की उपस्थिति को ही नकार दिया था। सोवियत राज्य का विनाश ही उसका घोषित लक्ष्य बन गया था। सोवियत संघ से 1929 में निष्कासित किये जाने के बाद त्रात्स्की खुले तौर पर सोवियत सत्ता के खिलाफ पश्चिमी साम्राज्यवादियों से लेकर जापानी साम्राज्यवादियों तक से हाथ मिलाकर षड्यंत्र रचने लगा। अपनी हत्या के ठीक पहले तीसरे इंटरनेशनल को कमजोर करने के लिए उसने 'चौथे इंटरनेशनल' की स्थापना की। जहां हिटलर 'एण्टी कॉमिंटर्न पैक्ट' कर रहा था वहां त्रात्स्की 'चौथा इंटरनेशनल' बना रहा था। इस तरह से पश्चिमी साम्राज्यवादी, फासीवादी और त्रात्स्कीपंथी साझे तौर पर सोवियत संघ के खिलाफ संघर्ष करने लगे।

त्रात्स्की के 'सतत् क्रांति', 'एक देश में समाजवाद सम्भव नहीं', 'तीसरी दुनिया के औपनिवेशिक देशों में क्रांति के सवाल' आदि विचारों का लेनिन ने अपने जीवन काल में तीव्र विरोध किया था। लेनिन के बाद स्तालिन ने त्रात्स्की के सर्वहारा विरोधी विचारों का खुलासा किया और बोल्शेविक पार्टी व समाजवादी राज्य को नेतृत्व दिया। मार्क्सवाद-लेनिनवाद के विकास में त्रात्स्कीवाद के खिलाफ संघर्ष की विशिष्ट भूमिका है। इस संघर्ष का ही परिणाम है कि त्रात्स्की व उसके अनुयाइयों के सारे प्रयत्नों के बावजूद यह मजदूर आंदोलन में एक अलग-थलग पड़ी प्रवृत्ति तक सीमित हो गया। विश्व साम्राज्यवाद ने त्रात्स्कीवाद का इस्तेमाल उसके जन्म से लेकर आज तक यद्यपि जारी रखा हुआ है परन्तु इसका असर विश्व मजदूर आंदोलन में नाममात्र का ही रहा है।

स्तालिन को मार्क्सवाद-लेनिनवाद की रक्षा करने का बीड़ा न केवल त्रात्स्कीपंथियों के खिलाफ उठाना पड़ा बल्कि उन्हें जिनोवियेव, कामेनेव व बुखारिन के खिलाफ भी उठाना पड़ा। जिनोवियेव व कामेनेव ने त्रात्स्की के साथ मोर्चा कायम किया था। कामेनेव ने ठीक क्रांति के पहले 'रूस में समाजवाद लागू नहीं किया जा सकता' कह कर क्रांति के मार्ग में रोड़े अटकाये थे। जिनोवियेव व कामेनेव ने बोल्शेविक पार्टी की अक्टूबर क्रांति की योजना को क्रांति के शत्रुओं के सामने लाकर अपने समर्पणवाद की एक झलक दिखला दी थी। बाद में वे समाजवाद के निर्माणकाल में अलग-अलग तरह से समस्यायें खड़ी करते रहे। जिनोवियेव ने तो लेनिनवाद के अंतर्राष्ट्रीय महत्व को कम करने के लिए उसे रूस के पिछड़ेनपन व उसके कृषि चरित्र से जोड़ने का काम किया था।

जिनोवियेव व कामेनेव को जब अपने घृणित इरादों में सीधे सफलता नहीं मिली तो वे षड्यंत्रकारी तौर-तरीके पर उतर आये थे। 1936-38 के काल में जब 'शुद्धीकरण अभियान' चलाया गया तब इनका ठीक से सफाया हो गया।

बुखारिन की भूमिका भी कम घृणित नहीं थी। उसने पहले यह दिखावा किया कि वह त्रात्स्की-जिनोवियेव आदि के खिलाफ चल रहे संघर्ष में स्तालिन के साथ है परन्तु बाद में उसकी भूमिका के बारे में खुलासा हुआ। वह इन्हीं गद्दारों के साथ मिलकर सोवियत सत्ता और बोल्शेविक पार्टी के विरुद्ध संघर्ष में लगा हुआ था। बुखारिन ने कृषि सामूहिकीकरण का घोर विरोध करके समाजवाद निर्माण में रोड़े अटकाने की कोशिश की थी। वह कुलकों, धनी किसानों के हितों का प्रतिनिधित्व करते हुए मांग करता था कि देहात में नई आर्थिक नीति को जारी रखा जाना चाहिए। स्तालिन ने बुखारिन के मंसूबों को बेनकाब कर समाजवाद निर्माण के कार्य को आगे बढ़ाया।

त्रात्स्की, जिनोवियेव, कामेनेव आदि ने मार्क्सवाद-लेनिनवाद में संशोधन करने के लिए वामपंथी लफ्फाजी का सहारा लिया था। स्तालिन ने इनसे संघर्ष के दौरान मार्क्सवाद-लेनिनवाद की हिफाजत की और उसे समृद्ध किया। ये संशोधनवादी ऐसे पेटी-बुर्जुआ थे जो साम्राज्यवाद के दौर में एक अकेले देश में समाजवाद निर्माण की चुनौतियों से घबरा गये और बुर्जुआ के सामने आत्मसमर्पण की वकालत करने लगे। लम्बे व कठोर संघर्ष में स्तालिन ने मार्क्सवाद-लेनिनवाद की रक्षा करते हुए इन्हें परास्त किया।

यह ऐसा काल भी था जिसमें पहले लेनिन व फिर स्तालिन के नेतृत्व में तीसरे इंटरनेशनल के निर्देशन व सहयोग से पूरी दुनिया में तेजी से मार्क्सवाद-लेनिनवाद का प्रसार हुआ। कई देशों में कम्युनिस्ट पार्टियों का गठन हुआ। मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियों ने दूसरे विश्व युद्ध के समय साम्राज्यवादी ताकतों व फासिस्ट शक्तियों के खिलाफ संघर्ष में अग्रणी भूमिका निभायी। दूसरे विश्व युद्ध के समाप्त होने के साथ दुनिया में एक समाजवादी खेमा अस्तित्व में आ गया।

ठीक इसी समय संशोधनवाद की एक नयी किस्म यूगोस्लाव संशोधनवाद या टीटोवाद के रूप में सामने आयी। उसने मार्क्सवाद-लेनिनवाद को पुराना घोषित कर दिया। यह उसने बदली हुयी विश्व परिस्थिति के नाम पर किया। यह सब कुछ वैसा ही था जैसा बर्नस्टीन ने मार्क्सवाद में नयी परिस्थितियों के अनुसार संशोधन का प्रस्ताव किया था।

टीटो यूगोस्लाविया की कम्युनिस्ट पार्टी का नेता था। द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान उसने फासीवादियों के खिलाफ छापामार युद्ध में यूगोस्लाविया की जनता का नेतृत्व किया था। द्वितीय विश्व युद्ध की समाप्ति के साथ वहां जनता का जनवादी गणराज्य कायम हुआ था।

अभी उसने समाजवाद की ओर कुछ डग भरे ही थे कि टीटो और यूगोस्लाविया की कम्युनिस्ट पार्टी के राष्ट्रवादी, संशोधनवादी रुझान सामने आने लगे। टीटो ने जबरन अल्बानिया को यूगोस्लाविया में मिलाने की कोशिश की। अंतर्राष्ट्रीय कम्युनिस्ट आंदोलन में समाजवादी क्रांति और जनवादी क्रांति के मिल जाने का अजीब सिद्धान्त पेश किया। टीटो को स्तालिन के नेतृत्व में अंतर्राष्ट्रीय कम्युनिस्ट आंदोलन द्वारा समझाने के कई प्रयास हुए। परन्तु ये सफल नहीं हुए अंततः 1948 में टीटो को कम्युनिस्ट विरोधी आचरण के कारण अंतर्राष्ट्रीय कम्युनिस्ट आंदोलन से निकाल दिया गया।

इसके बाद टीटो ने स्तालिन व अंतर्राष्ट्रीय कम्युनिस्ट आंदोलन पर हमला बोल दिया। और वह संशोधनवाद की राह पर चल कर यूगोस्लाविया में पूंजीवाद की पुनर्स्थापना करने लगा। और जैसा कि प्रसिद्ध है इस मामले में वह ख्रुश्चोव का गुरू व पथ प्रदर्शक साबित हुआ। उसने यूगोस्लाविया में सच्चे कम्युनिस्टों का निर्मम दमन किया और यूगोस्लाविया की कम्युनिस्ट पार्टी को भंग कर उसे यूगोस्लाव कम्युनिस्ट लीग में तब्दील कर दिया। उसने यूगोस्लाविया में पूंजीवाद को बढ़ावा देने के लिए सहकारी खेती के स्थान पर निजी खेती, "मजदूरों के स्वशासन" के नाम पर उद्योगों को प्रबन्धकों-अधिकारियों को सौंपना, निजी कारोबार व विदेशी कारोबार को बढ़ावा देना तथा निजी सम्पत्ति रखने के हक देना आदि कार्य किये।

साम्राज्यवादियों ने टीटो के इन कदमों में भरपूर साथ दिया तथा यूगोस्लाविया उनके लिए कच्चे माल का स्रोत व बाजार बन गया।

स्तालिन की मृत्यु के बाद जब सोवियत सत्ता पर ख्रुश्चोव ने कब्जा कर लिया तो उसने टीटो के साथ पुनः सम्बन्ध बहाल किये और उसे समाजवादी देश घोषित कर दिया। इस तरह वह उसी तरह पूंजीवाद की पुनर्स्थापना के रास्ते पर चल पड़ा जिस पर टीटो चल रहा था।

माओ के नेतृत्व में चीन की कम्युनिस्ट पार्टी ने टीटो के संशोधनवाद का पर्दाफाश किया। और बताया कि जब मजदूर वर्ग सत्ता हथिया लेता है तब भी पूंजीपति वर्ग और सर्वहारा वर्ग के बीच संघर्ष जारी रहता है। यूगोस्लाव कम्युनिस्ट लीग ऐसी पार्टी के रूप में सामने आयी जो पतित होकर पूंजीवादी पार्टी बन गयी। और आगे यह भी स्थापित किया कि पुराना संशोधनवाद, श्रमिक-अभिजात वर्ग को खरीदने और पालने-पोसने की साम्राज्यवादी नीति के परिणामस्वरूप पैदा हुआ था। आधुनिक संशोधनवाद साम्राज्यवाद द्वारा समाजवादी देशों के नेता-ग्रुपों को खरीद कर पाला-पोसा गया है।

अंतर्राष्ट्रीय कम्युनिस्ट आंदोलन पर आधुनिक संशोधनवाद द्वारा बोले गये हमलों में टीटो से ज्यादा व्यापक व घातक प्रभाव डालने वाला, ख्रुश्चोवी संशोधनवाद द्वारा बोला गया हमला साबित हुआ। इसने पूरे कम्युनिस्ट आंदोलन में टूट-फूट व बिखराव को जन्म दिया।

ख्रुश्चोव ने षड्यंत्रकारी ढंग से सोवियत सत्ता पर कब्जा किया और तेजी से पूंजीवाद की पुनर्स्थापना कर दी। सोवियत सत्ता पर कब्जा करने के बाद उसने मार्क्सवाद-लेनिनवाद पर हमला करने के लिए स्तालिन को माध्यम बनाया। उसने आरोप लगाया कि स्तालिन तानाशाह थे। आरोप लगाया कि स्तालिन ने देश और पार्टी में जनवाद का गला घोंट दिया, अपने विरोधियों का कत्ल कराया, लाखों किसानों को मौत के मुंह में धकेला, उनके जमाने में कोई भी सुरक्षित नहीं था, आदि। यह हमला व्यक्तिगत व गाली-गलौच से भरा हुआ था और स्तालिन की लाइन या उनकी सैद्धान्तिक प्रस्थापनाओं की कोई समीक्षा नहीं थी।

स्तालिन के ऊपर बोले गये ख्रुश्चोव के हमले को समाजवाद के दुश्मनों खासकर साम्राज्यवादियों ने हाथों हाथ लिया। सोवियत संघ के खिलाफ उनके सारे षड्यंत्र, हमले जो नुकसान नहीं पहुंचा सके थे वह ख्रुश्चोव ने एक झटके में कर दिया। स्तालिन साम्राज्यवादियों की आंखों में हमेशा खटकते थे।

ख्रुश्चोव ने स्तालिन पर हमला बोलने के लिए सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी की बीसवीं कांग्रेस के मौके को चुना था। यह कांग्रेस स्तालिन की मृत्यु के तीन साल बाद 1956 में हुयी थी। इसी कांग्रेस में उसने "शांतिपूर्ण सहअस्तित्व", "शांतिपूर्ण प्रतियोगिता"

और "शांतिपूर्ण संक्रमण" नाम से संशोधनवादी सिद्धान्त पेश किये। उसके बाद अपने संशोधनवादी सिद्धान्त को पूर्ण रूप देते हुए सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी को "समूची जनता की पार्टी" और सोवियत राज्य को "समूची जनता का राज्य" घोषित कर दिया।

ख्रुश्चोव इसके साथ इस बात पर जोर देने लगा कि सोवियत संघ में वर्ग खत्म हो चुके हैं, पूंजीवाद की पुनर्स्थापना का खतरा मिट चुका है और वहां कम्युनिज्म का निर्माण हो रहा है।

ख्रुश्चोव की सारी बातें झूठ और फरेब से भरी हुयी थीं। अंतर्राष्ट्रीय कम्युनिस्ट आंदोलन के समक्ष उसके चरित्र का उद्घाटन करते हुए चीन की कम्युनिस्ट पार्टी, जिसका नेतृत्व माओ कर रहे थे, ने लिखा,

> "ख्रुश्चोव ने इतिहास के सभी अवसरवादियों और संशोधनवादियों के मार्क्सवाद विरोधी विचारों को इकट्ठा करके उनमें एक पूरी संशोधनवादी दिशा- "शांतिपूर्ण सह अस्तित्व", "शांतिपूर्ण होड़", "शांतिपूर्ण संक्रमण", "समूची जनता का राज्य" और "समूची जनता की पार्टी"- गढ़ निकाली। उसने साम्राज्यवाद के प्रति आत्मसमर्पणवादी नीति अपनाई और जनता के क्रांतिकारी संघर्षों का विरोध करने और उन्हें खत्म करने के लिए वर्ग-सहयोग के सिद्धान्त का इस्तेमाल किया। अंतर्राष्ट्रीय कम्युनिस्ट आंदोलन में सर्वहारा अंतर्राष्ट्रवाद की जगह महा राष्ट्र अहंकारवाद देकर उसने फूटपरस्त नीति लागू की। सोवियत संघ के अन्दर सर्वहारा अधिनायकत्व को समाप्त करने के लिए उसने बड़ी मेहनत की और समाजवादी व्यवस्था की जगह पर पूंजीवादी विचारधारा, राजनीति, अर्थव्यवस्था और संस्कृति को बिठा कर पूंजीवाद को फिर से कायम करने की कोशिश की।"
> ('महान बहस', पृष्ठ 376, पैरा-3, अंतर्राष्ट्रीय प्रकाशन)

माओ के नेतृत्व में चीन की कम्युनिस्ट पार्टी ने ख्रुश्चोव के हमले का माकूल जवाब दिया। अल्बानिया की लेबर पार्टी भी अपने नेता अनवर होजा के साथ इस हमले के जवाब में उतर आयी। दुनिया भर में सच्चे कम्युनिस्ट माओ के साथ आ खड़े हुए। चीन व अल्बानिया की पार्टी के इतर अन्य देशों में जहां कम्युनिस्ट पार्टियां सत्ता में थीं ने या तो ख्रुश्चोव का साथ दिया या फिर बीच-बीच की अवस्थिति ग्रहण की।

माओ ने ख्रुश्चोव के संशोधनवादी विचारों का न केवल खण्डन किया बल्कि वे उन सवालों से भी जूझे जो उस वक्त कम्युनिस्ट आंदोलन में उठ खड़े हुए थे। ये सवाल थे कि क्यों किसी कम्युनिस्ट पार्टी में ख्रुश्चोव जैसे लोग पैदा हो जाते हैं, कि क्यों समाजवाद में पूंजीवाद की पुनर्स्थापना का खतरा मौजूद होता है, कि समाजवाद में पूंजीवाद की पुनर्स्थापना को कैसे रोका जा सकता है।

ख्रुश्चोवी संशोधनवाद के खिलाफ जोरदार संघर्ष चलाते हुए माओ ने न केवल मार्क्सवाद-लेनिनवाद की रक्षा की बल्कि उसकी प्रस्थापनाओं की व्याख्या की और एक नये स्तर पर विकसित किया। समाजवादी समाज में पूंजीवादी पुनर्स्थापना के कारण बताये और उससे निपटने के लिए 'महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति' की अवधारणा दी। और इस तरह मार्क्सवाद-लेनिनवाद को एक नयी ऊंचाई मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओ विचारधारा के रूप में प्रदान की। जिस तरह लेनिन ने दूसरे इंटरनेशनल के संशोधनवादियों से लड़ते हुए मार्क्सवाद का विकास मार्क्सवाद-लेनिनवाद के स्तर पर किया था ठीक वैसा ही माओ ने आधुनिक संशोधनवादियों से लड़ते हुए मार्क्सवाद-लेनिनवाद का विकास एक नये स्तर मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओ विचारधारा के स्तर पर किया।

माओ ने बताया कि समाजवादी समाज में वर्ग और वर्ग संघर्ष बने रहते हैं। यह एक संक्रमणकालीन समाज है। इस संक्रमणकालीन समाज की अवधि दीर्घ होती है। उत्पादन के साधनों में निजी मालिकाना और शोषण खत्म होने के बावजूद माल, मुद्रा व मूल्य का नियम काम करता रहता है। 'योग्यतानुसार कार्य और कार्यानुसार वेतन' का नियम काम करने से बुर्जुआ अधिकार बने रहते हैं। तीन भेदों: शारीरिक श्रम व मानसिक श्रम, शहर और देहात तथा कृषि और उद्योग के मौजूद रहने आदि से वह जमीन मौजूद रहती है जिसमें पूंजीवाद की वापसी का खतरा मौजूद रहता है। ये नये-नये पूंजीवादी तत्वों को पैदा करते रहते हैं। इसके अलावा पुराने किस्म के विचार, आदतें, मूल्य एक लम्बे समय तक मौजूद रहते हैं। कम्युनिस्ट पार्टी में भी दो लाइनों का संघर्ष मौजूद होता है जो कि समाज में मौजूद वर्ग संघर्ष की घनीभूत अभिव्यक्ति होता है। पार्टी के शीर्ष नेतृत्व में या पूरी पार्टी में पूंजीवादी पथगामियों की भरमार होने से पूंजीवाद की पुनर्स्थापना का खतरा नजदीक आ जाता है।

'महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति', जो कि अपने सारतत्व में एक राजनीतिक क्रांति है, इस बात को सुनिश्चित करती है कि सत्ता में सर्वहारा वर्ग का कब्जा बरकरार रहे और समाजवादी समाज साम्यवाद की ओर लगातार बढ़ता रहे।

माओ का यह मार्क्सवाद-लेनिनवाद में अत्यन्त महत्वपूर्ण योगदान था। अब मार्क्सवादी वह ही नहीं था जो सर्वहारा वर्ग की तानाशाही को स्वीकारता था बल्कि उसके लिए समाजवाद में सर्वहारा वर्ग की तानाशाही के अंतर्गत 'महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति' के सिलसिले को स्वीकारना भी आवश्यक था।

1956 में पूंजीवाद की पुनर्स्थापना के बाद सोवियत संघ एक के बाद एक नये संकटों में फंसता गया। ख्रुश्चोव, ब्रेझनेव के सोवियत संघ को वहां पहुंचना ही था जहां उसका 1991 में विघटन हो गया।

ख्रुश्चोवी संशोधनवादी से जिस समय अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर लड़ाई चल ही रही थी ठीक उसी समय संशोधनवाद का एक नया रूप 'यूरो कम्युनिज्म' के नाम से 1960 खासकर 70 के दशक में सामने आया। यह ख्रुश्चोवी संशोधनवाद का नया संस्करण भर था।

स्पेन की कम्युनिस्ट पार्टी के नेता कैरिल्लो, फ्रांस की कम्युनिस्ट पार्टी के माशाई व इटली की कम्युनिस्ट पार्टी के बर्लिंगे इसके प्रमुख प्रवक्ता के रूप में उभरे थे। इन पार्टियों ने ख्रुश्चोवी संशोधनवाद का अनुसरण करते हुए उसे अपना लिया था पर ये सोवियत संघ की पार्टी पर निर्भर नहीं थे।

'यूरो कम्युनिज्म' के प्रवक्ताओं का कहना था कि उनके देशों में कायम बुर्जुआ जनतंत्र व संविधान के जरिये समाजवाद की ओर बढ़ा जा सकता है। सर्वहारा तानाशाही और क्रांति को इन्होंने बीते जमाने की चीज घोषित कर दिया। मार्क्सवाद-लेनिनवाद को अपनी पार्टी की विचारधारात्मक शर्तों में से इन्होंने हटा दिया और लेनिनवादी पार्टी की धारणा को भी इन्होंने त्याग दिया।

'यूरो कम्युनिज्म' के प्रवक्ताओं ने कहा कि परम्परागत अर्थों में सर्वहारा वर्ग नहीं रह गया है। उनके अनुसार अब मजदूर वर्ग, बुद्धिजीवियों और यहां तक कि पूंजीपति वर्ग में भी भेद नहीं रह गया है। इन सबका हित समाजवाद में ही जाने से बनता है। सिर्फ एकाधिकारी पूंजीपति वर्ग इन सबसे अलग और ऊपर है। परन्तु समाजवादी उद्यम (सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों को दिया गया नाम) एकाधिकारी पूंजीवाद को कमजोर कर उस पर लगाम लगा सकते हैं। उनके अनुसार बुर्जुआ जनवाद राज्य का सर्वोच्च रूप है और यह सबका राज्य है तथा समाजवाद राष्ट्रीय समाजवाद होगा। फ्रांसीसी समाजवाद, इतालवी समाजवाद, स्पेनी समाजवाद इत्यादि।

इस राष्ट्रीय समाजवाद में निजी सम्पत्ति भी रहेगी और सार्वजनिक भी। योजना भी होगी और बाजार भी। माल-मुद्रा-मुनाफा भी रहेंगे।

यूरो-कम्युनिज्म की झंडाबरदार बनी पार्टियों का एक सुनहारा इतिहास भी रहा था। तीसरे इंटरनेशनल के शुरुआती दिनों में गठित इन पार्टियों ने फासीवाद व नाजीवाद के खिलाफ संघर्ष में लोकप्रिय मोर्चे गठित करने व छापामार युद्ध में जनता का नेतृत्व किया था। इस दौरान व्यापक जनाधार हासिल करने के साथ इन पार्टियों में ऐसे लोग भर गये थे जो कम्युनिस्ट नहीं बल्कि जनवादी थे। दूसरे विश्वयुद्ध की समाप्ति के बाद जब इन देशों में समाजवादी क्रांति का कार्यभार सामने आया तो ऐसे तत्व पीछे हटने लगे। ये पार्टियां ढुलमुलपने का शिकार हो गयीं। ख्रुश्चोवी संशोधनवाद के छा जाने के साथ ये भी संशोधनवादी हो गयीं।

दूसरे विश्वयुद्ध के बाद जब इन देशों में पुनर्निर्माण व 'कल्याणकारी राज्य' का दौर चला तो ये पार्टियां अपनी क्रांति करने की क्षमता अपने वर्गीय आधार खासकर अभिजात मजदूर व गैर कम्युनिस्ट तत्वों के कारण तेजी से खोती चली गयीं। इस तरह से ये वहां पहुंच गयीं जहां इनकी विचारधारा 'यूरो कम्युनिज्म' के रूप में प्रकट हुयी। सोवियत संघ के विघटन के साथ इन पार्टियों ने 'यूरो कम्युनिज्म' को भी अलविदा कह दिया और शुद्ध पूंजीवादी पार्टियां बन गयीं। ख्रुश्चोवी संशोधनवाद ने जिस तरह अपनी परिणति गोर्वाचौफ-येल्त्सिन के रूप में पायी वैसा ही इनके साथ हुआ। इनमें से कई ने अपने नाम तक बदल लिये और कम्युनिस्ट शब्द से छुटकारा पा लिया।

ख्रुश्चोव की तरह जिसने एक समाजवादी देश को पूंजीवादी देश में बदलने का काम किया वह देंग-श्याओ-पिंङ था। देंग-श्याओ-पिंङ, ल्यू-शाओ-ची ऐसे चीनी नेताओं के नाम हैं जो चीन की नवजनवादी क्रांति की मंजिल पूरी होने के बाद समाजवाद की दिशा में आगे नहीं बढ़ना चाहते थे। वे पूंजीवाद की पुनर्स्थापना चाहते थे। इसके लिए इन्होंने हर तरह की कोशिशें कीं। ख्रुश्चोव के नेतृत्व में सोवियत संघ में पूंजीवाद की पुनर्स्थापना इनके लिए आदर्श बन गयी थी। ये नेता चीन की कम्युनिस्ट पार्टी के प्रमुख नेताओं में थे तथा चीनी राज्य में उच्च पदों पर बैठे थे। पार्टी और समाज में इनका बड़ा आधार था। इनके खिलाफ संघर्ष लम्बा व कठिन था। ल्यू-श्याओ-ची देश के राष्ट्रपति और देंग पार्टी के महासचिव थे।

माओ ने इन दुरंगी नेताओं को तुरंत पहचान लिया था। उन्होंने इनके खिलाफ तीखा संघर्ष छेड़ दिया। यह संघर्ष व्यापक रूप ग्रहण करता गया। 'महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति' के समय पूरा चीनी समाज इसकी जद में आ गया।

ल्यू-श्याओ-ची ने पूर्व के संशोधनवादियों की तरह ही मार्क्सवादी शब्दावली के आवरण में ही अपने सिद्धान्त पेश किये। उसने समाजवादी निर्माण के दौर में "यंत्रीकरण पहले सहकारी बाद में" का नारा उछाला जो धनी किसान और कुलकों की वर्गीय मांग का द्योतक था।

ल्यू-श्याओ-ची, देंग-श्याओ-पिंङ सोवियत संशोधनवादियों के दिखाये रास्ते का अनुसरण कर रहे थे। 'विकसित समाजवादी प्रणाली और पिछड़ी उत्पादन शक्तियों के बीच के अंतर्विरोध' को उन्होंने ऐसे समय गढ़ा जब चीन में उत्पादन साधनों की स्वामित्व प्रणाली के समाजवादी रूपान्तरण का कार्य तेजी से चल रहा था। इस गैर-मौजूद अंतर्विरोध का प्रयोग उन्होंने समाजवादी समाज में मौजूद उत्पादन सम्बन्धों और उत्पादक शक्तियों के बीच, अधिरचना और आर्थिक आधार के बीच हमेशा मौजूद रहने वाले अंतर्विरोध और उससे निकलने वाले क्रांतिकारी कार्यभारों को नकारने के लिए किया।

चीन की नवजनवादी क्रांति के बाद के इतिहास पर गौर करें तो ल्यू-श्याओ-ची व देंग-श्याओ-पिंङ और उनके समर्थकों के खिलाफ माओ व उनके सहयोगियों का संघर्ष लगातार चलता रहा था और 'महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति' के दौरान सबसे ऊंचे स्तर पर जा पहुंचा था। सांस्कृतिक क्रांति के दौरान ल्यू व देंग को उनके पदों से हटा दिया गया। ल्यू-श्याओ-ची की कुछ समय बाद मौत हो गयी परन्तु देंग माफी मांग कर 1973 में पार्टी में वापस आ गया। लेकिन उसके व्यवहार में परिवर्तन न आने के कारण उसे 1976 में दोबारा पदों से हटा दिया गया।

1976 में माओ की मृत्यु के बाद पूंजीवादी पथगामियों ने षड्यंत्र रचते हुए पार्टी व राज्य पर कब्जा कर लिया। धूर्त, दुरंगा देंग-श्याओ-पिंङ इनका नेता बनकर उभरा। माओ के पक्के सहयोगियों (चांग चिन च्याओ, याओ वेन युवान, चियांग चिन, वांग हुय वेन) को "गैंग ऑफ फोर" कह कर बदनाम कर, उनमें से तीन को फांसी दे दी गयी व माओ की पत्नी चियांग चिन को जेल में सड़ने के लिए डाल दिया गया। समाजवादी पथ के समर्थक माओ के साथियों को हजारों की संख्या में या तो जेल में ठूंस दिया गया या मौत के घाट उतार दिया गया। इसके साथ चीन में पूंजीवाद की पुनर्स्थापना हो गयी।

देंग-श्याओ-पिंङ ने सत्ता और पार्टी पर कब्जा करने के बाद 'महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति' को महान विपदा घोषित कर दिया। उसने 1956 के बाद की माओ की शिक्षाओं, कार्यों को खारिज कर घोषित किया कि माओ 70 फीसदी सही और 30 फीसदी गलत थे। उसने दुनिया भर की संशोधनवादी पार्टियों को कम्युनिस्ट घोषित कर उनसे सम्बन्ध बहाल कर दिये।

उसने अपना घृणित व घातक तीन दुनिया का वर्ग सहयोगी सिद्धान्त पेश किया। कुछ समय में चीन को उसने एक खुले पूंजीवादी देश में तब्दील करने के लिए तेजी से कदम उठाये। खेती का निजीकरण, उद्योग व व्यापार में निजी उद्यमों सहित विदेशी तकनीक व पूंजी को छूट दे दी।

माओ विचारधारा के स्तर तक विकसित हो चुके मार्क्सवाद-लेनिनवाद ने दुनिया भर के कम्युनिस्टों को देंग-श्याओ-पिंङ के वर्ग सहयोगी सिद्धान्तों, घृणित कारनामों, पूंजीवादी पुनर्स्थापना के कारणों को समझने में ठीक मदद की और सही रास्ते की ओर लगातार बढ़ने की प्रेरणा दी।

माओ की मृत्यु के बाद मार्क्सवाद पर एक बड़ा हमला अल्बानिया की लेबर पार्टी के नेता अनवर होजा द्वारा बोला गया। यह हमला ख्रुश्चोव या देंग-श्याओ-पिंङ के हमले से भिन्न था। यह हमला माओ विचारधारा पर था।

अनवर होजा ने उस वक्त माओ और चीन की कम्युनिस्ट पार्टी का साथ दिया था जिस वक्त ख्रुश्चोव एण्ड कम्पनी ने स्तालिन के ऊपर हमला करते हुए मार्क्सवाद-लेनिनवाद की बुनियादी शिक्षाओं को मानने से इंकार कर दिया था। अल्बानिया की लेबर पार्टी के नेजा अनवर होजा ने स्तालिन की रक्षा करते हुए
ख्रुश्चोव के संशोधनवाद की आलोचना की थी।

1960 के दशक के अंत तक चीन की कम्युनिस्ट पार्टी और अल्बानिया की लेबर पार्टी के सम्बन्ध बेहद करीबी के थे। अनवर होजा ने एक समय माओ की नीतियों का समर्थन किया था। 'महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति' की तर्ज पर अपने देश में भी कुछ अभियान चलाये थे। सम्बन्धों में तब तल्खी आनी शुरू हुयी जब चीन ने संयुक्त राज्य अमेरिका से सम्बन्ध सामान्य करने शुरू किये। अनवर होजा ने साम्राज्यवादी संयुक्त राज्य अमेरिका व समाजवादी चीन के बीच बन रहे इन सम्बन्धों को गलत माना और उसके बाद उन्हें माओ में सब कुछ गलत नजर आने लगा।

1976 में माओ की मृत्यु के बाद अनवर होजा ने माओ पर खुला हमला बोल दिया। उन्होंने कहा कि माओ कभी कम्युनिस्ट नहीं थे बल्कि वह एक पेटी बुर्जुआ क्रांतिकारी थे। होजा के अनुसार चीन में कभी समाजवाद नहीं था। चीन की महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति पर टिप्पणी की कि वह न महान, न सर्वहारा, न सांस्कृतिक और न ही क्रांति थी। होजा ने माओ द्वारा स्तालिन के मूल्यांकन को नकार दिया और घोषित किया कि स्तालिन सौ फीसदी सही थे। होजा ने यह भी कहा कि माओ की यह बात गलत है कि समाजवाद में वर्ग, वर्ग संघर्ष बने रहते हैं। होजा ने माओ विचारधारा के हर तत्व को इस तरह नकार दिया। इस तरह से होजा ने मार्क्सवाद-लेनिनवाद के सृजनात्मक विकास में माओ के योगदान को मानने से इंकार कर दिया।

माओ विचारधारा : मार्क्सवाद-लेनिनवाद का सृजनात्मक विकास है, इस बात को न मानने के कारण होजा काउत्स्की और प्लेखानोव की कतार में शामिल हो गये जिन्होंने लेनिनवाद को मार्क्सवाद का सृजनात्मक विकास मानने से इंकार कर दिया था और संशोधनवादी बन गये थे।

अनवर होजा के राष्ट्रीय संकीर्णतावाद और रूढ़िवाद ने उन्हें एक भिन्न ढंग से संशोधनवाद की पांतों में शामिल कर दिया। उनके पास स्तालिन का वस्तुगत मूल्यांकन नहीं था। इसी तरह से उनके पास उन सवालों के सही जवाब नहीं थे जो सोवियत संघ में पूंजीवाद की पुनर्स्थापना से उठ खड़े हुए थे। उनकी रूढ़िवादिता और संकीर्ण राष्ट्रवाद संशोधनवाद के लिए मुख्यतः जिम्मेदार थे।

अनवर होजा का ख्रुश्चोवी संशोधनवाद के खिलाफ खड़ा होना एक समय माओ व चीनी कम्युनिस्ट पार्टी का साथ देना, चीन में पूंजीवाद की पुनर्स्थापना के बाद देंग-श्याओ-पिंङ का सत्तारूढ़ होने के समय पलट कर माओ पर हमला करना आदि बातों ने कम्युनिस्ट आंदोलन में कई विचारधारात्मक विभ्रम फैलाये। स्वयं अल्बानिया होजा की लाइन पर चलकर वहीं पहुंचा गया जहां अन्य देश पहुंच गये थे। अल्बानिया की लेबर पार्टी और उसके नेता के रूप में अनवर होजा ने दुनिया के क्रांतिकारी कम्युनिस्ट आंदोलन को काफी नुकसान पहुंचाया। और उनके विचार आज भी पहुंचा रहे हैं।

इस हिस्से में वर्णित प्रमुख संशोधनवादी विचारधाराओं के अतिरिक्त ढेरों अन्य संशोधनवादी विचारधाराएं आज मजदूर आंदोलन से लेकर कम्युनिस्ट आंदोलन में मौजूद हैं। यदि सार रूप में देखा जाये तो ये सभी किसी न किसी रूप में मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओ विचारधारा पर हमला बोलती हैं। विभ्रम फैलाती हैं अभी हाल में भूतपूर्व मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओ विचारधारा मानने वाले बाब अवाकिएन ने 'नव संश्लेषण' के नाम पर विचारधारात्मक विभ्रम फैलाया है। इस तरह से हम देखते हैं कि लेनिन की यह उक्ति कि 'इतिहास का द्वन्द्वात्मक विकास होता है कि मार्क्सवाद की सैद्धान्तिक विजय उसके शत्रुओं को मार्क्सवादी नकाब चढ़ाने को बाध्य करती है कि अंदर से सड़ा हुआ उदारतावाद समाजवादी अवसरवाद के रूप में अपने को पुनरुज्जीवित करने का प्रयास करता है' बार-बार सही साबित होती है। सारे तरफ से किये जाने वाले हमलों के बीच मार्क्सवाद अपनी सच्चाई को बार-बार स्थापित करता है। और हर बार पहले से ज्यादा उन्नत और मजबूत होता जाता है। मार्क्सवाद की प्रकृति ही कुछ ऐसी है।

आगे, भारत सहित पूरी दुनिया में मौजूद विभिन्न क्रांतिकारी व संशोधनवादी पार्टियों, ग्रुपों, संगठनों का एक जायजा लिया गया है।

III

आज की दुनिया पर एक नजर

कभी मार्क्स ने कहा था,

"... ... ... समाजवादी पंथवाद के विकास और असली मजदूर आंदोलन के विकास में सदा से विलोम अनुपात रहा है, जिस अनुपात में एक बढ़ता है उसी अनुपात में दूसरा घटता है। पंथों का उस समय तक (ऐतिहासिक दृष्टि से) औचित्य रहता है, जब तक कि मजदूर वर्ग स्वतंत्र ऐतिहासिक आंदोलन के लिए परिपक्व नहीं हो जाता। पर ज्यों ही उसमें यह परिपक्वता आ जाती है त्यों ही सभी पंथ सारतत्व में प्रतिगामी बन जाते हैं। ... ..."

('फ्रेडरिक बोल्ट के नाम मार्क्स का पत्र, 23 नवम्बर, 1871, स्रोत : मार्क्स-एंगेल्स संकलित पत्र व्यवहार (1844-1895), प्रगति प्रकाशन मास्को, 1982 हिंदी संस्करण, पृष्ठ 196-197)

कार्ल मार्क्स की बात हमारी आज की दुनिया पर लागू करने पर हम पाते हैं कि आज 'असली मजदूर आंदोलन' के स्थान पर 'समाजवादी पंथों' का बोलबाला है। यह बात पूरी दुनिया की तरह हमारे देश पर भी लागू होती है। ये पंथ, इतने अधिक हैं कि इनका लेखा-जोखा आसानी से संभव भी नहीं है। जितनी जानकारी हासिल की जायें, जितनी खोजें (इंटरनेट आदि माध्यमों से) की जायें, उतने ही नये पंथ प्रकाश में आने लगते हैं।

इतिहास के झरोखे से बात करें तो पहले इंटरनेशनल का नामलेवा वैसे तो कोई नही बचा पर पहले इंटरनेशनल में शामिल रहे अराजकतावादी एक धारा के रूप में मौजूद रहे हैं।

1876 में पहले इंटरनेशनल के अवसान के करीब डेढ़ दशक बाद 1889 में विभिन्न देशों की मजदूर वर्ग की पार्टियों सोशल-डेमोक्रेटिक, सोशलिस्ट, लेबर पार्टियों आदि ने एंगेल्स के नेतृत्व में दूसरे इंटरनेशनल की स्थापना की थी। जर्मनी की सोशल-डेमोक्रेटिक पार्टी इसमें सबसे बड़ी थी। दूसरे इंटरनेशनल की दिशा मूलतः मार्क्सवादी थी परन्तु इसका विकास ऐसे समय में हुआ जब पूंजीवाद के अपेक्षाकृत शांतिपूर्ण विकास का काल था। दूसरे इंटरनेशनल की पार्टियों में पर्याप्त मात्रा में अवसरवाद और बाद के समय में संशोधनवाद मौजूद था। इसका कारण इन पार्टियों के अभिजात मजदूर वर्ग के आधार व राजनैतिक कैरियरवादी निम्न पूंजीवादी बुद्धिजीवियों के इन पार्टियों के नेता बन कर उभर आने में सन्निहित था। इसकी चर्चा कुछ देर पहले की जा चुकी है कि कैसे पहले विश्व युद्ध के फूट पड़ने पर दूसरे इंटरनेशनल के लिए अपने अस्तित्व को बचाना मुश्किल हो गया। इस साम्राज्यवादी युद्ध के समय इन पार्टियों ने अपनी पितृभूमि की रक्षा के नाम पर अपनी लुटेरी सरकारों का पक्ष लेना शुरू किया। 1916 में दूसरे इंटरनेशनल का पतन हो गया।

1920 में भंग इंटरनेशनल को पुनर्गठित करने के प्रयास हुए। लेकिन कई पार्टियों के इसमें शामिल न होने से यह पहली वाली स्थिति में नहीं पहुंच सका। 1919 में तीसरे इंटरनेशनल के गठन के साथ क्रांतिकारी कम्युनिस्ट पार्टियां, समूह लेनिन के नेतृत्व में पहले ही अलग हो चुके थे। इस बीच 'ढाईवें इंटरनेशनल' के नाम से मशहूर एक इंटरनेशनल की स्थापना हुयी। इस ढाईवें इंटरनेशनल का नाम 'इंटरनेशनल वर्किंग यूनियन ऑफ सोशलिस्ट पार्टीज' (IWUSP) था। इसमें आस्ट्रिया की सोशल डेमोक्रेटिक पार्टी का मुख्य असर था। 1923 में दूसरे इंटरनेशनल व ढाईवें इटरनेशनल का विलय हो गया। इस विलय के फलस्वरूप 'सोशल डेमोक्रेटिक लेबर एण्ड सोशलिस्ट इंटरनेशनल' का गठन हुआ। इसका अस्तित्व 1940 तक रहा। फासीवाद के उदय व दूसरे विश्व युद्ध के समय यह इंटरनेशनल भंग हो गया। 1951 में 'सोशलिस्ट इंटरनेशनल' के नाम से इसका फिर से पुनर्गठन हुआ।

इस 'सोशलिस्ट इंटरनेशनल' में इस समय 100 देशों की 153 सदस्य पार्टियां है। भारत की कांग्रेस पार्टी भी इस इंटरनेशनल की सदस्य है (यह पहले 1993 में शामिल हुयी, 2014 से यह इसकी पूर्ण सदस्य है)। इस बात से सहज अनुमान लगाया जा सकता है इस इंटरनेशनल का आज चरित्र क्या है। ग्रीस के पूर्व प्रधानमंत्री गिओर्गी पापेन्द्रयू इसके वर्तमान अध्यक्ष हैं।

तीसरे इंटरनेशनल की स्थापना 'महान अक्टूबर समाजवादी क्रांति' के बाद हुई थी। महान अक्टूबर समाजवादी क्रांति' ने पूरी दुनिया के सर्वहारा वर्ग सहित सभी शोषित-उत्पीड़ितों को मुक्ति की राह दिखायी थी। तीसरे इंटरनेशनल के पहले एशिया, अफ्रीका, लातिन अमेरिका में कम्युनिस्ट पार्टियां ओर मजदूर आंदोलन अधिकांश देशों में नहीं था। इन क्षेत्रों मे पहले व दूसरे इंटरनेशनल का प्रभाव नहीं था। तीसरे इंटरनेशनल ने सभी देशों में कम्युनिस्ट पार्टियों के गठन में नेतृत्व दिया व कई तरह से सहायता प्रदान की। तीसरे इंटरनेशनल ने अपने भीतर से अवसरवादी, संशोधनवादी, सामाजिक अंधराष्ट्रवादी तथा अन्य तमाम किस्म की निम्न पूंजीवादी प्रवृत्तियों को किनारे लगाकर सर्वहारा वर्ग की विश्व पार्टी के रूप में अपने को स्थापित किया।

तीसरे इंटरनेशनल ने राष्ट्रीय मुक्ति आंदोलन को विश्व सर्वहारा आंदोलन के अभिन्न हिस्से के तौर पर स्वीकारा और हर तरह से राष्ट्रीय मुक्ति आंदोलन की मदद की।

तीसरे इंटरनेशनल को द्वितीय विश्व युद्ध के कारण उत्पन्न हो गयी जटिल विश्व परिस्थिति के बीच 1943 में भंग कर दिया गया।

तीसरे इंटरनेशनल में टूट व बिखराव पैदा करने तथा विश्व साम्राज्यवाद के हाथ का खिलौना बनते हुए त्रात्सकी ने 1938 में चौथे इंटरनेशनल की स्थापना की थी। आज पूरे विश्व में त्रात्स्कीपंथियों ने कई इंटरनेशनल बनाये हुए हैं। इनके बीच फूट दर फूट का

इतिहास है। इनके कुछ नाम इस प्रकार हैं : चौथा इंटरनेशनल, इंटरनेशनल मार्क्सिस्ट टेण्डेंसी (IMT), कमेटी फार ए वर्कर्स इंटरनेशनल, इंटरनेशनल कमेटी ऑफ द फोर्थ इंटरनेशनल (wsws.org नाम से वेबसाइट), पांचवां इंटरनेशनल आदि, आदि।

त्रात्स्कीपंथी मजदूर आंदोलन में विचारधारात्मक विभ्रम फैलाने में सबसे आगे हैं। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं के प्रकाशन के अलावा ये इंटरनेट पर सैकड़ों वेबसाइट का संचालन करते हैं। मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओ विचारधारा के खिलाफ खासकर स्तालिन, सोवियत समाजवाद, माओ व महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति के खिलाफ कुत्सा प्रचार में सारी ऊर्जा व मेधा लगा देते हैं।

भारत में त्रात्स्कीपंथियों की नाममात्र की ही उपस्थिति है। उपरोक्त किस्म-किस्म के इंटरनेशनल के कुछ सदस्यों, समर्थकों के अलावा कुछ संगठन हैं। इनके नाम हैं :'इंकलाबी कम्युनिस्ट संगठन' जिसके प्रमुख नेता मगन देसाई थे। इसका कुछ काम गुजरात व पश्चिमी बंगाल में था। 'कम्युनिस्ट लीग', 'रेडिकल सोशलिस्ट' आदि नामों से भी ये सक्रिय हैं।

'रिव्लोशनरी वर्कर्स पार्टी', 'मार्क्ससिस्ट लीग ऑफ केरला' आदि कई नामों से त्रात्स्कीपंथी सत्तर-अस्सी के दशक तक सक्रिय थे। आज इनका कुछ भी असर नहीं है। कोई नामलेवा नहीं है।

तीसरे इंटरनेशनल के भंग हो जाने के बाद पहले स्तालिन और उनकी मृत्यु के बाद माओ अंतर्राष्ट्रीय कम्युनिस्ट आंदोलन को दिशा निर्देश देते रहे। परन्तु दोनों ने ही किसी नये इंटरनेशनल की स्थापना के प्रयास नहीं किये। स्तालिन के समय सन् 1947 से 'कम्युनिस्ट इन्फारमेशन ब्यूरो' (कॉमिंफॉर्म) के जरिये विभिन्न कम्युनिस्ट पार्टियां के बीच सहयोग व परस्पर विचार-विमर्श होता था। अप्रैल 1956 में यह विघटित हो गया। ख्रुश्चोवी संशोधनवाद के फूट पड़ने के बाद अंतर्राष्ट्रीय कम्युनिस्ट आंदोलन मोटे तौर पर दो हिस्सों मे विभाजित हो गया। सोवियत संघ में पूंजीवाद की पुनर्स्थापना के बाद मास्को 'नव संशोधनवाद' का अंतर्राष्ट्रीय केन्द्र बन गया।

1991 में सोवियत संघ के विघटन के साथ यह केन्द्र विघटित हो गया। जो काम अपने विघटन से पहले सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी कर रही थी वह काम अब चीन की कम्युनिस्ट पार्टी करने लगी। चीन में माओ की मृत्यु के बाद 1976 में पूंजीवाद की पुनर्स्थापना हो गयी थी। और इस पुनर्स्थापना के साथ ही पूरी दुनिया में कहीं भी समाजवाद या सर्वहारा वर्ग की सत्ता नहीं रही।

आज अंतर्राष्ट्रीय कम्युनिस्ट आंदोलन से सीधा आशय ऐसे क्रांतिकारी पार्टियों व संगठनों से है जो मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओ विचारधारा/माओवाद को अपनी विचारधारा के रूप में स्वीकार करते हैं। यद्यपि इसके बोध से लेकर उनके बीच कम्युनिस्ट आंदोलन के इतिहास के कतिपय बिन्दुओं पर मतैक्य नहीं है। कार्यक्रम, कार्यनीति, कार्यशैली के कई मतभेद मौजूद हैं। परन्तु इस बात को लेकर मतभेद नहीं है कि समाजवाद में सर्वहारा वर्ग की तानाशाही के अंतर्गत 'महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति' का एक सिलसिला जरूरी है।

ऐसे कई संगठन व पार्टियां मौजूद हैं जो मार्क्सवाद-लेनिनवाद को स्वीकार करती हैं और स्तालिन की भूमिका को भी स्वीकार करती हैं परन्तु वे मार्क्सवाद-लेनिनवाद में आगे के विकास को माओ विचारधारा को नहीं स्वीकार करते हैं। इनमें अनवर होजा से लेकर नव-स्तालिनवादी तक हैं।

1957 व 1960 में कम्युनिस्ट व मजदूर पार्टियों की बिरादराना बैठक क्रमशः मास्को व बुखारेस्ट में हुयी थी। 1957 में मास्को घोषणापत्र व 1960 में वक्तव्य (डिक्लरेशन) जारी किये गये। इनमें 81 पार्टियों ने भागीदारी की थी। इन बैठकों में सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी और चीन की कम्युनिस्ट पार्टी में मतभेद शुरू हो गये थे। ये मतभेद 1963 में 'महान बहस' के साथ पूरी दुनिया के सामने खुल गये थे। इस बहस के दौरान अधिकांश पार्टियां सोवियत संशोधनवादियों के साथ हो गयी थीं। चीन का साथ केवल अल्बानिया की लेबर पार्टी ने दिया था। रोमानिया, वियतनाम, उत्तरी कोरिया की पार्टियों ने बीच की स्थिति ग्रहण की और बाद में अपना अलग 'राष्ट्रीय' रास्ता चुन लिया।

सोवियत संघ के विघटन तक 1960 की ख्रुश्चोवी पार्टियों की बैठकों का सिलसिला चलता सा रहा। 1998 में कम्युनिस्ट पार्टी ऑफ ग्रीस ने फिर से इन संशोधनवादी पार्टियों की सालाना बैठकें आयोजित करना शुरू किया। 28 से 30 अक्टूबर 2016 को इनकी 18वीं अंतर्राष्ट्रीय बैठक वियतनाम में हुयी। इस 18वीं 'इंटरनेशनल मीटिंग ऑफ कम्युनिस्ट एण्ड वर्कर्स पार्टियों' में चीन की कम्युनिस्ट पार्टी, क्यूबा की कम्युनिस्ट पार्टी सहित पचास से अधिक पार्टियों ने भागीदारी की। इसमें भाकपा व माकपा भी शामिल थीं।

माओ विचारधारा को अस्वीकार करने वाले अनवर होजा को मानने वालों ने 'इंटरनेशनल कान्फ्रेंस ऑफ मार्क्सिस्ट-लेनिनिस्ट पार्टीज एण्ड आर्गेनाइजेशन (यूनिटी एण्ड स्ट्रगल') (ICMLPO) नाम से संगठन बना रखा है। आई सी एम एल पी ओ में दो दर्जन से अधिक पार्टियां व संगठन हैं। ये हर वर्ष अपने सम्मेलन करते हैं व 'यूनिटी एण्ड स्ट्रगल' नाम से कई भाषाओं में, हर छः महीने में, अपना विचारधारात्मक मुखपत्र निकालते हैं। भारत में इस विचारधारा के समर्थक 'रिवोलुशनरी डेमोक्रेसी आर्गेनाइजेशन ऑफ इंडिया' नाम से कुछ व्यक्ति मौजूद हैं।

रूस सहित पूर्व सोवियत संघ के सदस्य देशों तथा यूरोप सहित दुनिया के कई देशों में 'स्तालिन' को मानने वाले परन्तु माओ अथवा होजा को न स्वीकार करने वाली कई पार्टियां व समूह मौजूद हैं। सोवियत संघ के विघटन के कुछ वर्षो बाद खास तौर से रूस सहित कई देशों में स्तालिन को पुनः स्थापित किया गया है। इन पार्टियों व ग्रुपों ने कई जगह पर स्तालिन की प्रतिमाएं पुनः स्थापित की हैं तथा मई दिवस, फासीवाद पर विजय दिवस आदि के उपलक्ष्य पर स्तालिन की तस्वीरें लेकर प्रदर्शन आयोजित होते हैं। यह सब स्तालिन को एक हानिरहित देव प्रतिमा के रूप में स्थापित करने की कोशिशें हैं। महान स्तालिन के विचारों और उनकी सर्वहारा क्रांति में अमर भूमिका से इन पार्टियों व कई समूहों का कोई लेना-देना नहीं है।

इन पार्टियों व समूहों में खुद को सीपीएसयू की वारिस बताने वाली एक प्रमुख पार्टी 'कम्युनिस्ट पार्टी ऑफ रसियन फेडरेशन' (CPRF या रूसी भाषा में KTRF) भी है। इसकी सदस्य संख्या दावों के अनुसार 5 लाख 70 हजार है। 'प्रावदा' का कई भाषाओं में

प्रकाशन करती है। स्तालिन के शासन को ठीक मानने के साथ यह अपने पार्टी सदस्यों को देंग-श्याओ-पिंङ की रचनाएं पढ़वाती है तथा उस सम्मेलन में हर वर्ष हिस्सा लेती है। जिसकी अगुवाई चीन की कम्युनिस्ट पार्टी करती है।

'कम्युनिस्ट पार्टी ऑफ अल्बानिया' (1991), 'कम्युनिस्ट पार्टी ऑफ जर्मनी' (KPD) (1990) से लेकर 'स्तालिन सोसाइटी' जैसे कई पार्टियां व समूह हैं जो ज्यादा ही दृढ़ता से स्तालिन को पकड़े हुए हैं।

मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओ विचारधारा/माओवाद मानने वाली कई पार्टियां, ग्रुप पूरी दुनिया में इस समय मौजूद हैं। ये पार्टियां साठ-सत्तर के दशक से तब अस्तित्व में आने शुरू हुए जब 'महान बहस' तथा 'महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति' की शुरुआत हुई। आज इन पार्टियों/ग्रुपों की उपस्थिति सभी महाद्वीपों में है। और यहां तक कि रूस और चीन में भी ऐसी पार्टियां व ग्रुप अस्तित्व में आ गये हैं।

रूस में वर्ष 2000 में 'रूसी माओइस्ट पार्टी' (RMP) अस्तित्व में आयी। यह पार्टी 1953 तक सीपीएसयू और 1976 तक सीपीसी की विरासत को स्वीकार करती है।

इसी तरह चीन में एक भूमिगत पार्टी (माओइस्ट कम्युनिस्ट पार्टी ऑफ चाइना (MCPC) नवम्बर 2008 में अस्तित्व में आयी। यह पार्टी 'मार्क्सवाद-लेनिनवाद- माओवाद' को स्वीकारती है और चीन में दूसरी समाजवादी क्रांति चाहती है ताकि पुनः 'सर्वहारा की तानाशाही' स्थापित हो सके। इसके अलावा भी 'महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति' की उपलब्धियों को स्वीकार करने वाले समूह या व्यक्ति चीन में मौजूद हैं।

यूरोप व अमेरिका के कई देशों में मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओ विचारधारा को मानने वाली पार्टियों ग्रुपों का एक सहयोग केन्द्र 'इंटरनेशनल कोआर्डिनेशन ऑफ रिवोलूशनरी पार्टीज एण्ड आर्गेनाइजेशन' (ICOR) के नाम से वर्ष 2010 में अस्तित्व में आया। इसकी वेबसाइट के अनुसार आई सी ओ आर में चार महाद्वीपों से 49 पार्टियां व संगठन हैं। जर्मनी की मार्क्सिस्ट-लेनिनिस्ट पार्टी ऑफ जर्मनी (एम एल पी डी), रूस की 'मार्क्सिस्ट-लेनिनिस्ट प्लेटफार्म' व रसियन्स माओइस्ट पार्टी इसके सदस्य हैं। भारत की दो पार्टी ग्रुप सी पी आई (एम एल) रेड स्टार व पीसी सी सी पी आई (एमएल) (संतोष राणा ग्रुप) इसके सदस्य हैं।

रिवोलूशनरी इंटरनेशनल मूवमेंट (रिम) के बारे में 'लाल सलाम' के पूर्व के अंकों में कई बार बात हो चुकी है। अतः यहां पुनः चर्चा की आवश्यकता नहीं है। बॉब अवाकिएन के 'नये साम्यवाद' व 'नये संश्लेषण' के बाद रिम का अस्तित्व नहीं रहा। बॉब अवाकिएन के विचारों के साथ रिम का हिस्सा रही मेक्सिको, ईरान व बॉब अवाकिएन की पार्टी आरसीपी है।

आईसीओआर, 'रिम', 'मिम' (माओइस्ट इंटरनेशनल मूवमैंट) जैसे अंतर्राष्ट्रीय संगठनों के अतिरिक्त भी कुछ अन्य ऐसे संगठन मौजूद हैं। लेकिन पूरी दुनिया में मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओ विचारधारा मानने वाली कई पार्टियां व ग्रुप मौजूद हैं जो किसी अंतर्राष्ट्रीय गोलबंदी का हिस्सा नहीं हैं। स्वयं हम अपने देश के अनुभव से जानते हैं कि ऐसे ढेरों ग्रुप मौजूद हैं। पूरी दुनिया सहित भारत में ये ग्रुप बनते व बिगड़ते रहते हैं। परन्तु अभी भी इतिहास पुनः उस दौर में नहीं पहुंचा है जहां 'मजदूर वर्ग का स्वतंत्र ऐतिहासिक आंदोलन' 'परिपक्व होकर इन पंथों को 'सार रूप में प्रतिगामी' बना दे।

सवाल उठता है कि इन प्रवृत्तियों, संगठनों, पार्टियों, ग्रुपों की बातें यहां क्यों की गई हैं। क्या महज सामान्य जानकारी (जनरल नॉलेज) के लिए। नहीं यहां हमें लेनिन की बात को पुनः स्मरण करना होगा जो उन्होंने 1901-1902 में कही थी,

> "दूसरे, सामाजिक जनवादी आंदोलन सारतः एक अंतर्राष्ट्रीय आंदोलन है। इसका मतलब न सिर्फ यह है कि हमें राष्ट्रीय अंधराष्ट्रवाद का मुकाबला करना चाहिए, बल्कि इसका मतलब यह भी है कि एक नये देश में शुरू होने वाला आंदोलन केवल उसी हालत में सफल हो सकता है, जब वह दूसरे देशों के अनुभव का उपयोग करे। इस अनुभव का उपयोग करने के लिए केवल उसकी जानकारी रखना या नवीनतम प्रस्तावों की नकल कर लेना काफी नहीं है। इसके लिए जरूरत इस बात की है कि इस अनुभव को आलोचनात्मक दृष्टि से अंगीकार किया जाये और उसे स्वतंत्र रूप से परखा जाये। आधुनिक मजदूर आंदोलन कितना बढ़ चुका है और कितनी शाखा- प्रशाखाओं में फैल चुका है, इसका जिसे थोड़ा भी ज्ञान है, वह यह समझ लेगा कि इस काम को पूरा करने के लिए सैद्धान्तिक शक्तियों तथा राजनीतिक (और साथ ही क्रांतिकारी) अनुभव के कितने विशाल संचित कोष की आवश्यकता है।" (लेनिन, 'क्या करें?', पृष्ठ-40, पैरा-2, हिंदी अनुवाद, प्रगति प्रकाशन)

IV
संशोधनवाद का आधार

जैसा कि हम देख आये हैं कि इतिहास में संशोधनवाद ने मुख्यतः अपने को दो रूपों में प्रकट किया। पहला रूप यह था कि मार्क्सवाद की शिक्षाएं पुरानी पड़ चुकी हैं, परिस्थितियां बदल चुकी हैं, अतः उसमें संशोधन किया जाय। बर्नस्टीन और दूसरे इंटरनेशनल से लेकर यूरो कम्युनिज्म तक इस तरह के संशोधनवाद के वाहक बने।

संशोधनवाद का दूसरा रूप मार्क्सवाद के सृजनात्मक विकास को अस्वीकार करने के रूप में प्रकट हुआ। यह मार्क्सवाद को एक विज्ञान के रूप में केवल औपचारिक तौर पर ही मान्यता देता है। वास्तविक तौर पर, एक विज्ञान के रूप में, उसमें होने वाले सृजनात्मक विकास को वह स्वीकार करने से इंकार कर देता है। रूढ़िवादिता, जड़सूत्रवाद का शिकार हो जाता है। पहले, मार्क्सवाद के

सृजनात्मक विकास के रूप में सामने आये, लेनिनवाद को नहीं स्वीकारा गया और बाद में मार्क्सवाद-लेनिनवाद में, माओ विचारधारा के रूप में हुए सृजनात्मक विकास को नहीं स्वीकारा गया। आज इसके एक प्रमुख उदाहरण के रूप में होजावाद को देखा जा सकता है। किम-इल-सुंग, चे, कास्त्रो आदि की विचारधाराएं भी ऐसी ही हैं।

संशोधनवाद का चाहे जो भी रूप हो सारतः यह पूंजीवादी विचारधारा है। मार्क्सवाद की क्रांतिकारी आत्मा को नष्ट कर, उसे पूंजीपति वर्ग के हितों के अनुकूल ढाल देना ही उसका काम है। और यह काम, उपरोक्त दोनों ही रूपों के तरीकों से किया जा सकता है।

संशोधनवाद का भौतिक व वैचारिक आधार, पूंजीवादी समाज व समाजवादी समाज दोनों में ही मौजूद होता है। पहले पूंजीवादी समाज के संदर्भ में, चर्चा करते हैं।

> "पूंजीवादी समाज के अंदर इसकी अनिवार्यता किस बात में निहित है? वह राष्ट्रीय विशिष्टताओं और पूंजीवादी विकास-स्तरों की विभिन्नताओं की अपेक्षा गहन क्यों है? इसलिए कि सभी पूंजीवादी देशों में सर्वहारा वर्ग के साथ-साथ सदा ही टुटपुंजिया वर्ग के, छोटे मिल्कियों के विस्तृत तबके होते हैं। पूंजीवाद का लघु उत्पादन से जन्म हुआ और निरंतर होता जा रहा है। पूंजीवाद (कारखानों के उपांगों, घर पर किये जाने वाले कामों और साइकिल-मोटर उद्योग, आदि जैसे बड़े उद्योगों की आवश्यकताओं के कारण सारे देश में बिखरे छोटे मिस्त्री (खानों) अनिवार्यतः सदा नये सिरे से नये-नये "बिचले तबकों" को जन्म दे रहा है। ये नये लघु उत्पादक भी उतने ही अनिवार्य रूप से फिर सर्वहारा वर्ग की पांतों में फेंके जा रहे हैं। बिल्कुल स्वाभाविक है कि मजदूरों की व्यापक पार्टियों की पांतों में टुटपुंजिया विश्व दृष्टिकोण बार-बार घुस आये। ... ..."
>
> (लेनिन, मार्क्सवाद और संशोधनवाद, पृष्ठ सं-383, संकलित रचनाएं, दस खंडों में, खंड-3, प्रगति प्रकाशन मास्को, 1982)

इस तरह से देखें तो मजदूर वर्ग की पांतों में लगातार आने वाली टुटपुंजिया आबादी पूंजीवादी दृष्टिकोण का एक प्रमुख स्रोत बनती है। ये निम्न पूंजीवादी तबकों से आये लोग, मजदूर आंदोलन के साथ-साथ सर्वहारा की पार्टी व अन्य संगठनों में भी आ जाते हैं। बुर्जुआ विचारधारा के वाहक होने वाले ये निम्न पूंजीवादी तबके अपने वर्ग की चारित्रिक विशेषताओं यानी ढुलमुलपन, कैरियरवाद, फैशनपरस्ती, मनोगतवाद, अराजकतावाद, व्यक्तिवाद आदि को पार्टी में ले आते हैं। इस तरह से देखें तो मजदूर आंदोलन में लगातार संशोधनवाद का खतरा मौजूद होता है।

इसके अलावा क्योंकि किसी भी समाज में, शासक वर्ग की विचारधारा प्रभुत्वशाली स्थिति में होती है, उसके पास विचारों को उत्पन्न करने और प्रसारित करने वाले साधन होते हैं, तो इसलिए मजदूर वर्ग में शासक वर्ग अर्थात पूंजीपति वर्ग के विचारों, मूल्यों, संस्कृति, विश्व दृष्टिकोण की मौजूदगी पर्याप्त मात्रा में मौजूद होती है। यह स्थिति निम्न पूंजीवादी विचारों के साथ-साथ संशोधनवाद के लिए मददगार बन जाती हैं।

साथ ही मजदूर वर्ग की पांतों मे ऐसे मजदूर भी होते हैं जो अभिजात मजदूरों की श्रेणी में आते हैं। यह हिस्सा यद्यपि मजदूर आबादी का बेहद छोटा हिस्सा होता है परन्तु अपनी हैसियत के कारण मजदूर आंदोलन को काफी प्रभावित करता है। इन अभिजात मजदूरों का जीवन, रहन सहन निम्न पूंजीवादी तबकों जैसा होता है। उसी की तरह की जीवन शैली, आदत, स्वभाव व आकांक्षाएं होने के कारण यह सुधारवादी प्रवृत्तियों, अर्थवाद, कानूनवाद, संसदवाद के साथ संशोधनवादी विचारों का स्वाभाविक वाहक बन जाता है। मुख्यतः संशोधनवादी पार्टियों के नेता, ट्रेड यूनियनों के नौकरशाह, मजदूर अखबारों के कर्ता-धर्ता इत्यादि इसी अभिजात मजदूर वर्ग से आते हैं। और इसी अभिजात मजदूर को अपना मुख्य आधार बनाते हैं। ये बाकी मजदूर आबादी और सर्वहारा क्रांति के ध्येय से अपना नाता तोड़ लेते हैं।

इन अभिजात मजदूरों को न केवल साम्राज्यवाद द्वारा बल्कि भारत जैसे पिछड़े देशों के पूंजीपति वर्ग और उसके राज्य द्वारा पाला-पोसा जाता है। इन्हें विशेष सुविधायें व भत्ते दिये जाते हैं। व्यापक मजदूर आबादी से इनका जीवन अलग होता है।

साम्राज्यवादी देशों के पूंजीपति न केवल अपने देश के बल्कि पूरी दुनिया के मजदूरों को लूटते हैं। दुनिया भर से कमाये जाने वाले अतिलाभ का एक अति अल्प हिस्सा मजदूर वर्ग के अभिजात तबके के ऊपर खर्च करते हैं। उसका जीवन स्तर बाकी मजदूर आबादी से ऊपर उठ जाता है। ये पूंजीपति की जूठन खाकर भ्रष्ट बन जाते हैं। मजदूरों का यह अभिजात हिस्सा अक्सर ही ट्रेड यूनियनों में संगठित होता है। अभिजात मजदूरों का यह तबका साम्राज्यवाद का सामाजिक अवलम्ब बन जाता है। यह मजदूर वर्ग में पूंजीवादी विचारों, संशोधनवाद का वाहक बन जाता है। पूंजीपति वर्ग संशोधनवाद की हर तरह से मदद करता है। उसे पालता-पोसता है। उसे हर तरह से साधन मुहैय्या कराता है। यह सब उसकी मजदूर वर्ग को सर्वहारा क्रांति से विमुख करने की रणनीति का हिस्सा होता है। मजदूर वर्ग की पार्टियों, संगठनों को कमजोर और उन्हें पूंजीवाद के अनुकूल बनाने के लिए यह ऊपर से कब्जे की रणनीति को अपनाता है।

पूंजीपति वर्ग अंदर से कब्जे की रणनीति ही तभी अपनाता है। जब वह सीधे तौर पर कम्युनिस्ट व मजदूर आंदोलन को कुचलने में कामयाब नहीं होता है। कम्युनिस्ट व मजदूर आंदोलन को खत्म करने के लिए वह अपने प्यारे जनवाद व अपने संविधान में कही गयी सब अच्छी बातों को भुला देता है। कम्युनिस्ट व मजदूर आंदोलन के नेताओं की निर्मम हत्या तक कर देता है। क्रांतिकारी कम्युनिस्ट आंदोलन के दमन से बीसवीं सदी का पूरा इतिहास भरा पड़ा है।

बीसवीं सदी का इतिहास बताता है कि पूरी दुनिया में किस तरह से कम्युनिस्ट पार्टियों का भीषण दमन किया गया। यह संयुक्त राज्य अमेरिका से लेकर जापान तक सभी जगह हुआ। इसका सबसे बड़ा उदाहरण इण्डोनेशिया की कम्युनिस्ट पार्टी का भीषण

दमन है। वहां लाखों कम्युनिस्टों को मौत के घाट उतार दिया गया और लाखों को जेल में अपनी मौत मरने के लिए ठूंस दिया गया। ऐसा ही लातिन अमेरिका से लेकर यूरोप तक के कई देशों में हुआ।

कम्युनिस्ट व मजदूर आंदोलन का पूंजीपति वर्ग द्वारा किया जाने वाला यह भीषण दमन भी कई पार्टियों व नेताओं के साहस खो देने, पीछे हटने, सुधारवाद को अपनाने व आत्मसमर्पण को मजबूर करता है। संशोधनवादी राह को अपनाने की ओर ले जाता है।

जहां तक समाजवाद की बात है वहां संशोधनवादियों का लक्ष्य पूंजीवाद की पुनर्स्थापना होता है। पूंजीवाद की पुनर्स्थापना के लिए वे सर्वहारा वर्ग की पार्टी और राज्य पर अंदर से कब्जे की नीति अपनाते हैं। ये मार्क्सवाद-लेनिनवाद की अपने वर्गीय आधार के हितों के अनुरूप व्याख्या करते हैं। ऐसी नीतियां, कार्यक्रम ही नहीं बनाते बल्कि हर तरह के छल-प्रपंच करते हैं ताकि पार्टी व राज्य उनके कब्जे में आ जाये। साम्राज्यवाद से इन पूंजीवादी पथगामियों के गुप्त व घनिष्ठ सम्बन्ध होते हैं। साम्राज्यवाद इनकी हर तरह से मदद करता है ताकि समाजवादी राज्य की ओर से मिल रही चुनौतियां समाप्त हो जाये और वह विश्व पूंजीवादी व्यवस्था का अंग बन जाये। पूंजीवादी पथगामी संशोधनवादी समाजवाद में पूंजीवाद के एजेण्ट होते हैं।

असल में, समाजवादी समाज एक ऐसा समाज होता है जिसमें शोषक वर्ग उत्पादन के साधन गंवा चुके होते हैं परन्तु एक वर्ग के रूप में इनका अस्तित्व मौजूद रहता है। इनकी मौजूदगी एक तो पुराने समाज के उन तत्वों के रूप में होती है जो अपने खोये हुए स्वर्ग की पुनः प्राप्ति की कोशिश कर रहे होते हैं। पूंजीपति वर्ग, भू-स्वामी वर्ग के सदस्य रहे यह तत्व पुरानी हैसियत वापस पाने के मंसूबे पाले रखते हैं। दूसरे समाजवादी समाज, जो कि संक्रमणकालीन समाज है, में वह भौतिक जमीन मौजूद होती है जो नये बुर्जुआ तत्वों को लगातार पैदा करती रहती है। यह भौतिक जमीन तीन बड़े विभेदों (मानसिक श्रम व शारीरिक श्रम, कृषि और उद्योग, शहर व देहात) तथा 'योग्यातानुसार कार्य और कार्यानुसार वेतन'के बुर्जुआ अधिकार के रूप में होती है। माल, मुद्रा व मूल्य व विनिमय के नियम की उपस्थिति लगातार इस बात का आधार पैदा करती रहती है कि पूंजीवादी तत्व पैदा हो सकें।

सोवियत संघ और उससे पहले यूगोस्लाविया में हुयी पूंजीवाद की पुनर्स्थापना के ऐतिहासिक उदाहरण के साथ-साथ माओ स्वयं अपने देश में पूंजीवादी पथगामियों से संघर्ष कर रहे थे। वे देख रहे थे कि किस तरह से, आधुनिक संशोधनवादियों टीटो और ख्रुश्चोव ने, मार्क्सवाद-लेनिनवाद की विद्रूप व्याख्या करते हुए एक समाजवादी देश को पूंजीवादी देश में बदल डाला था। माओ ने सर्वहारा अधिनायकत्व को जारी रखने के लिए 'महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति' का सूत्रपात किया। 'महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति' के एक महत्वपूर्ण दस्तावेज "16 धाराओं वाला फैसला" पूंजीवादी पुनर्स्थापना के सदर्भ में एक स्थान पर कहता है,

> "यद्यपि पूंजीपति वर्ग का तख्ता पलटा जा चुका है तथापि वह आज भी शोषक वर्गों के पुराने विचारों, पुरानी संस्कृति, पुराने रिवाजों और पुरानी आदतों का इस्तेमाल कर जनता का आचरण भ्रष्ट करने, उसके दिमाग को अपने काबू में करने तथा सत्ता फिर से हथियाने की कोशिश कर रहा है। सर्वहारा वर्ग को इससे बिलकुल उल्टी कार्यवाही करनी चाहिए, उसे विचारधारात्मक क्षेत्र में पूंजीपति वर्ग की हर चुनौती का डट कर सामना करना चाहिए तथा सर्वहारा वर्ग को नए विचारों, नई संस्कृति नए रिवाजों और नई आदतों का इस्तेमाल कर समूचे समाज की मानसिक स्थिति को बदलने की कोशिश करनी चाहिए। इस समय हमारा लक्ष्य उन कर्ताधर्ता लोगों के खिलाफ संघर्ष करना और उन्हें धराशायी कर देना जो पूंजीवादी रास्ता अपना रहे हैं, विद्याध्ययन के क्षेत्र में काम करने वाले प्रतिक्रियावादी "धुरंधर विद्वानों" और पूंजीपति वर्ग व तमाम शोषक वर्गों की विचारधारा की आलोचना करना तथा उनका खण्डन करना, तथा शिक्षा, साहित्य व कला तथा ऊपरी ढांचे के उन तमाम अंगों का रूपान्तरण कर देना जो समाजवादी आर्थिक आधार के अनुरूप नही हैं ताकि समाजवादी व्यवस्था को सुदृढ़ व विकसित किया जा सके।" (महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति के बारे में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी का फैसला', 'राजसत्ता और क्रांति' पेज 98, पैरा-1, अंतर्राष्ट्रीय प्रकाशन)

'महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति' जैसी कई क्रांतियों के जरिये ही सर्वहारा अधिनायकत्व को सुनिश्चित किया जा सकता है। तभी यह संभव हो सकता है समाजवाद में पूंजीवादी पुनर्स्थापना को रोका जा सके। उसके भौतिक व वैचारिक आधार को पूर्णतः खत्म किया जा सके ताकि समाजवादी समाज के ऐतिहासिक चरण को पार करते हुए साम्यवादी समाज में प्रवेश किया जा सके।

इस तरह से हम देखें तो पूंजीवादी और समाजवादी समाज दोनों में ही संशोधनवाद का भौतिक व वैचारिक आधार मौजूद होता है। इस आधार के खिलाफ सतत् संघर्ष जहां मार्क्सवाद-लेनिनवाद -माओ विचारधारा की हिफाजत व विकास के लिए आवश्यक होता है वहां इसके बिना सर्वहारा वर्ग अपने ऐतिहासिक मिशन साम्यवादी समाज की ओर एक कदम भी नही बढ़ सकता है।

V
संशोधनवाद : पूंजीपति वर्ग के सामने निर्लज्ज आत्मसमर्पण

हम देख आये हैं कि कैसे बीसवीं सदी का इतिहास मार्क्सवाद और संशोधनवाद के बीच भीषण संघर्ष का इतिहास है। इस संघर्ष के दौरान मार्क्सवाद विकसित होकर मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओ विचारधारा के स्तर पर पहुंचा तो संशाधनवाद ने मजदूर वर्ग की विचारधारा पर पैंतरे बदल-बदल कर हमले बोले। बीसवीं सदी के इतिहास ने बखूबी साबित कर दिया कि मार्क्सवाद क्या है और संशोधनवाद क्या है। मार्क्सवाद का लेनिनवाद और माओ विचारधारा के रूप में हुआ विकास लेनिन के शब्दों में कहें तो यह साबित

करता है कि वह एक 'कट्टर सिद्धान्त न होकर कार्य का जीता जागता पथ-प्रदर्शक है ताकि वह 'सामाजिक जीवन में हुए तीव्र परिवर्तन जो कि आश्चर्यजनक ढंग से हुए' हैं को 'प्रतिविंबित कर सके।'

इस बात पर यदि गौर करें तो यह बात एक उदाहरण से सही साबित हो जाती है। पूंजीवाद अपनी उच्चतम अवस्था साम्राज्यवाद के रूप में प्रकट हुआ और उसको मार्क्सवादी राजनैतिक अर्थशास्त्र के आधार पर लेनिन द्वारा ठीक-ठीक विश्लेषित किया गया। इस बात को संशोधनवाद द्वारा दूसरे ढंग से अभिव्यक्त किया गया कि मार्क्सवाद पुराना पड़ गया है और उसकी बातें गलत साबित हुयी हैं। लेनिनवाद ने सर्वहारा वर्ग की मुक्ति के ऐतिहासिक कार्यभार को संबोधित करते हुए 'महान अक्टूबर समाजवादी क्रांति' का सूत्रपात किया तो दूसरे इंटरनेशनल के नेताओं ने सर्वहारा वर्ग से गद्दारी करके अपने-अपने देश के बुर्जुआ के सामने आत्मसमर्पण कर दिया।

संशोधनवाद मार्क्सवाद के सबसे बुनियादी कार्यभार को त्यागने की आवश्यकता बताता है या इसकी मांग करता है। वह सर्वहारा की मुक्ति के कार्य को लेकर भ्रम फैलाता है, उसे छोड़ने की वकालत करता है। और इसका सीधा अर्थ है मजदूर वर्ग को सदा-सदा के लिए दासता की बेड़ियों में बांधे रखना । उसकी उजरत गुलाम वाली अवस्था को बना के रखना ताकि शोषक वर्ग हमेशा बने रहें। पूंजीवादी व्यवस्था सदा कायम रहे।

बर्नस्टीन से लेकर देंग-श्याओ-पिंग तक ने साबित किया कि वे अपनी लफ्फाजी से सर्वहारा वर्ग को धोखा दे रहे थे। उसके मुक्ति के मिशन से गद्दारी कर रहे थे। समय ने साबित किया कि इन संशोधनवादियों ने पूंजीपति वर्ग के सामने बेशर्म ढंग से आत्मसमर्पण किया। इन्होंने पूंजीवादी व्यवस्था के बुनियादी लक्षणों के बारे में झूठ फैलाया। बर्नस्टीन ने कहा कि पूंजीवाद के विकास ने मार्क्सवाद के सिद्धान्तों को गलत साबित कर दिया है। इस तरह उसने पूंजीवाद की पैरोकारी की। तो देंग-श्याओ-पिंग जैसों ने यह साबित करने की कोशिश की कि समाजवाद में वर्ग संघर्ष को जारी रखने की आवश्यकता नहीं है। बस उत्पादक शक्तियों का विकास आवश्यक है। इस तरह समाजवाद में पूंजीवाद की पुनर्स्थापना की कोशिश की। बाद में उसने सर्वहारा तानाशाही को कायम रखने वाली 'महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति' को विपदा घोषित कर दिया।

मार्क्सवाद के जन्म व विकास ने साबित किया है कि उसे सदा ही पूंजीवादी और निम्न पूंजीवादी विचारधारा से संघर्ष करना पड़ा है। और यह संघर्ष मार्क्स के जमाने से लेकर आज तक जारी है। और इस सघर्ष के दौरान मार्क्सवाद पहले से ज्यादा विकसित और सशक्त हुआ है। और इसीलिए संशोधनवाद को मार्क्सवाद पर हमला बोलने के लिए पहले से ज्यादा परिष्कृत मार्क्सवादी प्रत्ययों का इस्तेमाल करना पड़ा है। व्रात्स्की, ल्यू-श्याओ-ची आदि स्तालिन और माओ से भी ज्यादा मार्क्सवादी बनने का दिखावा करते हैं। वे सर्वहारा वर्ग से सीधे गद्दारी कर रहे थे परन्तु ऐसा प्रपंच रच रहे थे मानो मार्क्सवाद की क्रांतिकारी आत्मा को सबसे सच्चे ढंग से पकड़े हुए हों। सोवियत संघ और चीन के समाजवादी समाज के खिलाफ लगातार षड्यंत्र रचने वाले व्रात्स्की, जिनोवियेव और ल्यू-श्याओ-ची, देंग-श्याओ-पिंग वही काम कर रहे थे जो समाजवादी सत्ताएं कायम होने के पहले दिन से, विश्व पूंजीवाद कर रहा था। यानी किसी भी तरह सर्वहारा राज कायम न हो पाये। कामयाब न हो पाये किसी भी तरह से बस मिट जाये।

अंत में एक सदी से भी अधिक समय पहले कही गयी लेनिन की यह बात आज भी उतनी ही महत्वपूर्ण व प्रासंगिक है जितनी अपने समय में थी। लेनिन ने कहा था,

> "चूंकि मार्क्सवाद एक कट्टर सिद्धान्त नहीं, एक मुकम्मल, तैयारशुदा और स्थिर मत नहीं, बल्कि कार्य का एक जीता-जागता पथप्रदर्शक है, इसीलिए वह सामाजिक जीवन की स्थिति के आश्चर्यजनक तीव्र परिवर्तन को प्रतिविबित कर पाया। यह परिवर्तन एक बहुत गहरी विच्छिन्नता, फूट और हर तरह के ढुलमुलपन-संक्षेप में मार्क्सवाद में एक गंभीरतम **आंतरिक संकट** में प्रतिविबित हुआ। इस विच्छिन्नता का दृढ़ प्रतिरोध मार्क्सवाद के **मौलिक सिद्धान्तों** की दृढ़तापूर्वक तथा अडिगतापूर्वक रक्षा करना फिर समय की कार्यसूचि में शामिल हो गया।" (लेनिन, 'मार्क्सवाद के ऐतिहासिक विकास की कुछ विशेषताएं' मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन ऐतिहासिक भौतिकवाद, प्रगति प्रकाशन मास्को, पृष्ठ 233, जोर मूल में)

यही वह बात है जो सबसे ज्यादा याद रखी जानी चाहिए।

और आज हमारे समय की कार्यसूचि में जो चीज सबसे ऊपर है। वह है: मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओ विचारधारा पर दृढ़तापूर्वक खड़ा हुआ जाए और हर किस्म के संशोधनवाद का मुंहतोड़ जवाब दिया जाय। मार्क्सवाद के "मौलिक सिद्धान्तों" की रक्षा की जाय।

मजदूर वर्ग की पांतों में पैठ जमाये खुले-छिपे संशोधनवादियों का पर्दाफाश किया जाय और पूरे मजदूर आंदोलन को मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओ विचारधारा के आधार पर पूरे मनोयोग पूर्वक लामबंद किया जाए। लेनिन ने बताया था कि क्रांतिकारी विचार के बिना क्रांतिकारी आंदोलन असम्भव है। मार्क्सवाद- लेनिनवाद-माओ विचारधारा के क्रांतिकारी विचार ही क्रांतिकारी आंदोलन को जन्म दे सकते हैं। इसीलिए आवश्यकता है कि सर्वहारा वर्ग की मुक्ति, उसके 'अंतिम लक्ष्य' साम्यवाद के लिए हम अपने पूरे वर्ग को एकजुट करें। समाजवादी क्रांतियों की नई श्रंखला का सूत्रपात करें।

निस्संदेह आनेवाला समय सर्वहारा वर्ग का है। बुर्जुआ का अतीत था हमारा भविष्य है। वर्तमान समय बुर्जुआ और उसके एजेण्ट संशोधनवादियों से भीषण संघर्ष का है। यह संघर्ष आवश्यक है इसे करना ही होगा। यह संघर्ष ठीक व सही ढंग से तभी चल सकता है। जब हम अपने-अपने देश में मार्क्सवाद-लेनिनवाद- माओ विचारधारा के आधार पर कम्युनिस्ट पार्टियों का गठन व निर्माण करें और उनके नेतृत्व में पूरे मजदूर वर्ग को संगठित करें।

■■■